ऋग्वेद यजुर्वेद

ओ३म्

पवमान

(मासिक)

मूल्यः ₹ 15

वर्ष : 27 ज्येष्ठ-आषाढ़ वि0स0 2072 जून 2015 अंक : 06

मुद्रकः सरस्वती प्रेस, देहरादून वजनः 50 ग्राम

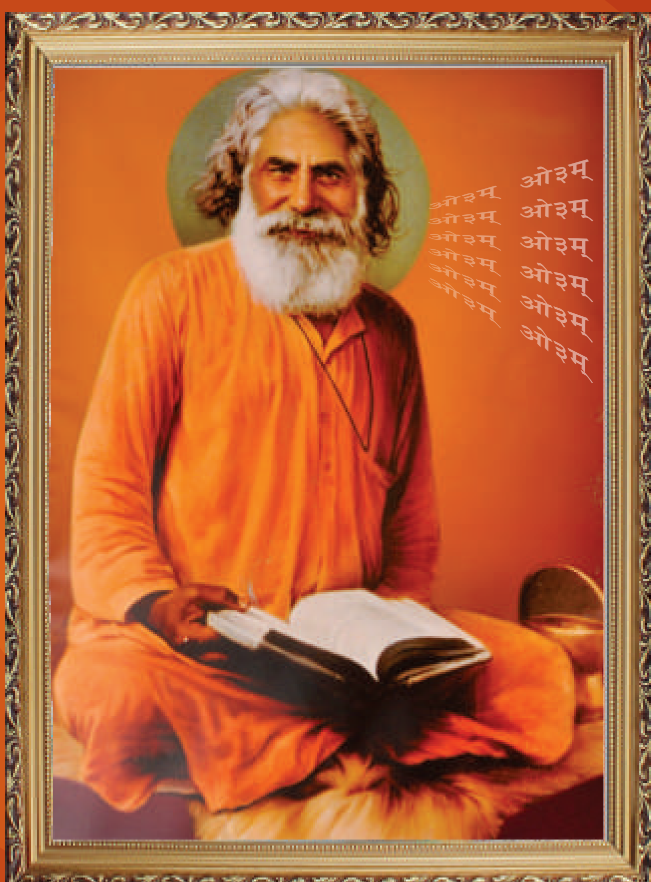

वीतराग महात्मा प्रभुआश्रित जी महाराज

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, नालापानी, देहरादून-248008

सामवेद अथर्ववेद

मई 2015 में गुरूकुल चोटीपुरा में आयोजित स्वामी दीक्षानन्द स्मृति समारोह की झलकियाँ

मई 2015 में तपोवन आश्रम देहरादून में आयोजित ग्रीष्मोत्सव की झलकियाँ

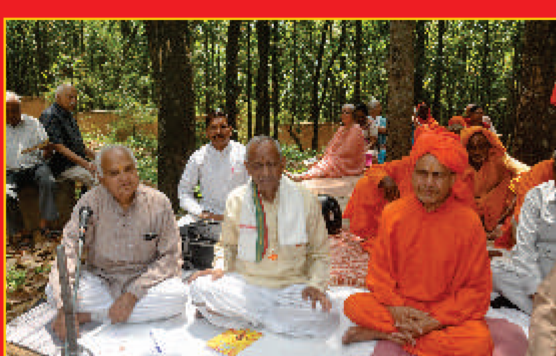

ओ3म्

पवमान

वर्ष–27 अंक–6

ज्येष्ठ प्रा.–आषाढ़ 2072 विक्रमी जून 2015

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,115 दयानन्दाब्द : 190

★

–: संरक्षक :–

स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती

★

–: अध्यक्ष :–

श्री दर्शनकुमार अग्निहोत्री

मो. : 09810033799

★

–: सचिव :–

प्रेम प्रकाश शर्मा

मो. : 9412051586

★

–: आद्य सम्पादक :–

स्व0 श्री देवदत्त बाली

★

–: मुख्य सम्पादक :–

कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

अवैतनिक

मो. : 08755696028

★

–: सम्पादक मण्डल :–

अवैतनिक

आचार्य आशीष दर्शनाचार्य

मनमोहन कुमार आर्य

★

–: कार्यालय :–

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन,

तपोवन मार्ग, देहरादून–248008

दूरभाष : 0135–2787001

Email : vaidicsadanashram88@gmail.com

Web-www.vaidicsadhanashramdehradun

विषयानुक्रम

सम्पादकीय	कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री	2
वेदामृत	स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती	3
उपासना कैसे करें?	कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री	4
ग्रीष्मोत्सव 2015	मनमोहन कुमार आर्य	7
महात्मा प्रभु आश्रित...........	मनमोहन कुमार आर्य	10
सुखी और स्वस्थ जीवन..........	आचार्य भगवानदेव वेदालंकार	14
कर्म का फल		16
परोपकार की भावना		17
मन शान्त करने का ढंग		18
यज्ञ रहस्य	प्रभु आश्रित महाराज	19
स्वर्ग खाली पड़ा है		21
सोयाबीन के उपयोग		23
छात्रवृत्ति का आप कैसे इस्तेमाल....	संजीव कुमार (छात्र)	25
संन्यास धर्म	अम्बाराम सिद्धान्त शास्त्री	26
जीवन यज्ञ : सभी कामनाओं की......	अखिलेश आर्येन्दु	29
शत्रु से प्रेम	पं. शिवशर्मा उपदेशक	30

पत्रिका का शुल्क : वार्षिक रु 150 : एक प्रति मूल्य : रु 15 : पन्द्रह वर्ष हेतु : रु 1500 पवमान पत्रिका का शुल्क / दानराशि कैनरा बैंक, क्लाक टावर, देहरादून (IFSC code : CNFB0002162) के खाता 'वैदिक साधन आश्रम' खाता सं. 2162101021169 में जमा करा सकते हैं।

पवमान में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र देहरादून ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

पवमान पत्रिका में विज्ञापन के रेट्स

1.	कलर्ड फुल पेज	रु. 5000/– प्रति माह
2.	ब्लैक एण्ड व्हाईट फुल पेज	रु. 2000/– प्रति माह
2.	ब्लैक एण्ड व्हाईट हॉफ पेज	रु. 1000/– प्रति माह

सम्पादकीय

जिज्ञासा

जिज्ञासा का अर्थ है– जानने की इच्छा, कौतुक या ज्ञान प्राप्त करने की उत्सुकता। मनुष्य के अन्दर जिज्ञासा आदिकाल से ही विद्यमान रही है। मनुष्य सदैव से ही क्या, कौन और कैसे के उत्तर खोजने में लगा रहा है। विभिन्न धर्म ग्रन्थों में आदम और हव्वा की कथा पढ़ने में आती है जिन्हें सबसे पहले फल खाकर उसका स्वाद जानने की जिज्ञासा हुई थी। सबसे पहले पहले गोल चक्कर या पहिये का आविष्कार हुआ जो जिज्ञासा का ही परिणाम था। मनुष्य में मुख्यतः दो प्रकार की जिज्ञासाएं होती हैं। पहली जिज्ञासा वह होती है जिससे भौतिक ज्ञान की अभिवृद्धि होती है। अंग्रेजी भाषा में एक कहावत है जिसका अर्थ है– जिज्ञासा ज्ञान की माता है। वास्तव में संसार में जितना भी ज्ञान और विज्ञान हमें दिखाई देता है उसके पीछे मनुष्य की जिज्ञासा की ही महत्वपूर्ण भूमिका रही है। जहां एक प्रकार की जिज्ञासा से भौतिक ज्ञान से विभिन्न प्रकार के विषयों का ज्ञान प्राप्तकर मनुष्य ने आदिम अवस्था से इतनी प्रगति की है वह जगत् के समस्त प्राणियों पर नियंत्रण करता है। उसने इसी ज्ञान के बल पर सुख–सुविधा के अनेक साधन प्राप्त कर लिए हैं। साहित्य, संगीत, कला गणित आदि सभी क्षेत्रों में जिज्ञासा के बल पर ही वह आज इस धरा पर राज्य कर रहा है।

दूसरे प्रकार की जिज्ञासा आत्मतत्त्व से सम्बन्ध रखती है। मनुष्य को आत्मा और परमात्मा के बारे में जानने की उत्कंठा ही आत्मज्ञान कहलाती है। मनुष्य को वेदों का ज्ञान सृष्टि के आरम्भ में परमेश्वर ने स्वयं दिया है। ऋषियों ने अपनी जिज्ञासा के बल पर वेदों के ज्ञान के आधार पर दर्शनों की रचना की जिनमें ब्रह्मज्ञान और आत्मज्ञान की जिज्ञासा कर अनेक प्रकार से उसे शान्त करने के प्रयास कर हम मनुष्यों का मार्गदर्शन किया है। इसी प्रकार शड्दर्शनों में भी जिज्ञासाओं का उल्लेख आता है। मीमांसा दर्शन का आरम्भ **''अथातो धर्म जिज्ञासा''** से हुआ है जिसका भावार्थ यह है कि हम अभ्युदय और निःश्रेयस के प्रतिपादक धर्म के मर्म को समझें। ब्रह्मसूत्र या वेदान्त दर्शन का आरम्भ ही **''अथातो ब्रह्मजिज्ञासा''** से हुआ है जिसका भावार्थ यह है कि जगत् की नश्वरता के बाद अनन्त, अखण्ड, महान् बह्म को जानने की जिज्ञासा होती है। मनुष्य को आत्मज्ञान हो जाये और वह ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर ले तो उसके बाद उसके लिए अन्य कुछ भी प्राप्तव्य शेष नहीं रहता है और वह मोक्ष प्राप्ति के मार्ग पर आगे बढ़ कर प्रथम सोपान प्राप्त कर लेता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने जब शिव की प्रस्तर–मूर्ति पर चूहों का उत्पात देखा तो उनके बाल मन में सच्चे शिव को जानने की जिज्ञासा हुई। फिर उनके मन में मृत्यु के रहस्य को जानने की जिज्ञासा हुई। युवा होने पर वे योग और ज्ञान की प्राप्ति हेतु जिज्ञासा लिए गुरुओं की तलाश करते रहे। उनके अन्तःकरण की योग पिपासा कुछ शान्त हुई परन्तु ज्ञान प्राप्ति की जिज्ञासा बनी रही जो गुरु दण्डी विरजानन्द के मिलने पर ही शान्ति की ओर अग्रसर हो सकी थी क्योंकि यह जिज्ञासा तो जीवन पर्यन्त बनी रहनी चाहिए।

कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

❀ वेदामृत ❀

वेद प्रक्षेप आदि से रहित है

स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

अन्ति सन्तं न जहात्यन्ति सन्तं न पश्यति।
देवस्य पश्य काव्यं न ममार न जीर्यति।।

(अथर्व० 10 । 8 । 32)

शब्दार्थ– (अन्ति) समीप (सन्तम्) होते हुए परमेश्वर को मनुष्य (न) नहीं (पश्यति) देख पाता और (अन्ति) समीप (सन्तम्) होते हुए को (न) नहीं (जहाति) छोड़ सकता है (देवस्य) दिव्य गुण–सम्पन्न परमात्मा के (काव्यम्) वेदरूपी काव्य को (पश्य) देखो। वह काव्य (न ममार) न कभी मरता है और (न) न ही (जीर्य्यते) कभी पुराना होता है।

भावार्थ– परमात्मा मनुष्य के अत्यन्त समीप है परन्तु वह उसे देख नहीं पाता। मनुष्य प्रभु को देख नहीं पाता परन्तु फिर भी वह उसे छोड़ नहीं सकता क्योंकि वह तो उसके अन्तर में रम रहा है।

जब परमात्मा को हम छोड़ नहीं सकते और उसे ढूंढने के लिए कहीं दूर जाने की आवश्यकता भी नहीं तब उस हृदय–मन्दिर में विराजमान प्रभु को जानने का, उसे प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए।

उसे प्राप्त करने के लिए उसके निर्मित सर्वोत्कृष्ट काव्य वेद का पठन, श्रवण, मनन और चिन्तन करना चाहिये। वेद संसार के पुस्तकालय में सबसे प्राचीन और अद्भुत एवं अनूठा काव्य है। इसके उपदेश कभी भी पुराने नहीं होते। वे सदा नये बने रहते हैं।

वेद का कभी नाश नहीं होता। उसमें परिवर्तन और परिवर्धन नहीं हो सकता क्योंकि उसका एक–एक स्वर, अक्षर, बिन्दु और मात्रा गिनी हुई है।

उपासना कैसे करें

—कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

उपासना शब्द 'आस्—उपवेशने' धातु से बना है जिसका अर्थ है— परमात्मा के समीप बैठना, ठहरना, स्थित होना या अपने आत्मा को परमात्मा में मग्न करना। आध्यात्मिक जगत् में यह अर्थ ईश्वर के आनन्दस्वरूप में आत्मा को मग्न करने के अर्थ में रूढ़ हो गया है। उपासना करने वाले का नाम उपासक और जिसकी उपासना की जाये वह उपास्य तथा जो की जाये उस प्रक्रिया का नाम उपासना है। यह विषय जीवात्मा का है, इन्द्रियों का नहीं, क्योंकि ईश्वर के आनन्दस्वरूप में आत्मा को मग्न करना है। महर्षि दयानन्द सरस्वती स्वमन्ताव्यामन्तव्य प्रकाश में कहते हैं— 'उपासना' जैसे ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव पवित्र हैं, वैसे अपने को व्याप्य जान के ईश्वर के समीप हम और हमारे समीप ईश्वर है, ऐसा निश्चय योगाभ्यास से साक्षात् करना उपासना कहाती है, इसका फल ज्ञान की उन्नति आदि हैं।

उपासना का विभिन्न धर्म/सम्प्रदायों में प्रचलित स्वरूपः—

सभी धर्मों और सम्प्रदायों में परमेश्वर की उपासना पर बहुत बल दिया गया है। देखा जाए तो सभी ईश्वरोपासना को ही धर्म समझते हैं और यह मानते हैं कि यदि उन्होंने उपासना कर ली हे तो वे धार्मिक हो गए हैं। प्रायः सभी लोग चाहे वे किसी भी धर्म या सम्प्रदाय के हों, प्रभु गुणों का बखान कीर्तन आदि के द्वारा करके, उसकी महिमा भजनों, श्लोकों और मंत्र—पाठ आदि करके, जप आदि द्वारा बार—बार दोहरा कर करते हैं। कई साधक तो उपासना का अर्थ तामस—तप समझते हैं जिसमें पंचाग्नियों के बीच शरीर को कष्ट देना, शरीर के किसी अंग को वर्षों निष्क्रिय करके रखते हैं जिससे करने वालों और देखने वालों दोनों को कष्ट होता है और किसी का भी कोई हित नहीं होता है।

क्या उपासना व्यापार की वस्तु है?

यह देखा जाता है कि बचपन से ही कई लोगों को यह बताया जाता है कि यदि मन्दिर में प्रसाद या रुपयों का चढ़ावा देंगे तो परमेश्वर प्रसन्न होकर उन्हें मनवांछित फल प्रदान करेंगे। यह बात उनके हृदय में बैठ जाती है और वे उपासना को व्यापार की वस्तु समझ बैठते हैं। वे समझते हैं कि परमेश्वर को प्रशंसा और कीर्तिमान चाहिए, जिसे प्रदान कर वे उससे अपना कोई भी प्रयोजन सिद्ध कर सकते हैं। परमेश्वर न तो प्रशंसा के भूखे हैं और न ही उन्हें किसी प्रसाद आदि से संतुष्ट किया जा सकता हैं। ऐसे समस्त प्रलोभन परमेश्वर को देने वाले, वास्तव में परमेश्वर के वास्तविक स्वरूप को नहीं जानते और इसी कारण से उनसे व्यापार करने की हिमाकत कर बैठते हैं। उपासना का सच्चा स्वरूप जानने के लिए हमें चार मुख्य बिन्दुओं पर विचार करना चाहिए। ये हैं:—

१. परमेश्वर का सच्चा स्वरूप

परमेश्वर सच्चिनन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, सर्वव्यापक और नित्य आदि अनेकानेक गुणों से युक्त है। परमेश्वर आप्त—काम और पूर्णकाम है। परमात्मा में कोई कामना नहीं है जिसे उन्हें पूरा करना हो। अथर्ववेद में परमात्मा के विषय में कहा गया है—

अकामो धीरो अमृतः स्वयंभू रसेन तृप्तो न कुतश्चनेनः। अथर्व0 10.8.44

इस मंत्र का भावार्थ यह है कि परमेश्वर अकाम हैं, सारी कामनाओं से रहित हैं, उन्हें अपने लिए किसी वस्तु को प्राप्त नहीं करना है, वे धीर हैं, संसार के किसी भी परिवर्तन से उनमें कोई विकार उत्पन्न नहीं होता, वे सदा एक–रस रहते हैं, वे अपनी समावस्था को नहीं खोते हैं, वे मृत्यु से रहित हैं, स्वयंभू हैं– अपनी सत्ता का हेतु स्वयं ही हैं, उनकी सत्ता में और कोई कारण नहीं है, उन्हें किसी ने बनाया नहीं है, वे सदा से स्वयं ही चले आ रहे हैं, वे आनन्द से तृप्त हैं, परिपूर्ण हैं अर्थात् कहीं से भी किसी प्रकार की कमियों वाले नहीं हैं।

२. जीवात्मा का स्वरूप–

जो चेतन, अल्पज्ञ, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख और ज्ञान गुण वाला और नित्य है, वह जीव कहलाता है। जीवात्मा नाम का चेतनतत्त्व बाल से अत्यन्त अणु है, छोटा है। महर्षि ने जीवात्मा को चेतन गुणों वाला कहा है। जीवात्मा स्वरूपतः अनादि और ज्ञान, प्रयत्न गुणों वाला तथा प्रवाह से संयोग–वियोग के कारण इच्छा, द्वेष, सुख, दुःख सांयोगिक लक्षणों वाला है, अर्थात् ये चारों गुण संयोग से पैदा होते हैं, अतः वियोग से नष्ट हो जाते हैं। इसी का नाम प्रवाह है। साथ ही जीवात्मा के कर्म भी प्रवाह से अनादि हैं। अथर्ववेद में कहा गया है–

बृहस्पतिर्मे आत्मा नृमणा हृद्यः।

अर्थात् आत्मा अणु है, अतः इसका निवास हृदय में है। उपासना के साधक प्रत्येक मनुष्य के लिए अपने स्वरूप को जानना आवश्यक है। महर्षि ने ऋवेद १/१६४/३२ के अर्थ में लिखा है कि जो जीव कर्ममात्र करते, किन्तु उपासना और ज्ञान को नहीं प्राप्त होते हैं वे अपने स्वरूप को भी नहीं जानते हैं। जो कर्म, उपासना और ज्ञान में निपुण हैं, वे अपने स्वरूप और परमात्मा के जानने के योग्य हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि परमात्मा को जानने के लिए जीवात्मा को जानना परमावश्यक है।

३. कर्मफल भोग का सिद्धान्त–

वैदिक धर्म के अनुसार प्रत्येक मनुष्य के लिए ईश्वरीय कर्मफल व्यवस्था परमात्मा के सार्वभौम नियमों द्वारा संचालित होती है। मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र है परन्तु फल परमात्मा के अधीन है। उसे शुभ और अशुभ कर्मों का फल अवश्य भोगना पड़ता है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि परमात्मा हमारे मुख से अपनी प्रशंसा के गीत सुन कर हमारे पक्ष में नहीं हो सकते हैं और हम पर अपनी अनुकम्पा कर हमारे दुःखों को दूर नहीं कर सकते हैं। वे अपनी प्रशंसा के स्थान पर हमारे कर्म अर्थात् हमारे आचरणों को देख कर शुभाशुभ आचरणों के अनुसार हमें सुख या दुःख प्रदान करते हैं। वे भक्ति के दौरान हमारे द्वारा भेंट के वादों से प्रभावित नहीं होते हैं।

४. उपासना का सही प्रयोजन–

अब हम यह विचार करते हैं कि परमेश्वर की भक्ति और उपासना क्यों करनी चाहिए। वेद में प्रभु के सम्बन्ध में स्तुति, प्रार्थना और उपासना विषयक अनेक मंत्र हैं। इस प्रकार वैदिक–धर्म प्रभु भक्ति के उपदेशों से परिपूर्ण है। जैसा कि लेख के आरम्भ में उपासना का अर्थ स्पष्ट किया गया था, उपासना का शब्दार्थ है– समीप बैठना, संगति में बैठना। इसके द्वारा हम परमेश्वर के समीप, उनकी संगति में बैठते हैं। आम साधक की दृष्टि से देखा जाए तो जो संगति का लाभ है, वही लाभ उपासना का है परन्तु महर्षि ने समस्त वैदिक साहित्य का मंथन कर मनुष्यों के लिए आवश्यक रूप से करणीय जो पंचमहायज्ञ बताए हैं, उनमें ब्रह्मयज्ञ जिसे संध्या भी कहा जाता है, उपासना हेतु महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। परमात्मा के गुणों का चिन्तन करते हुए उसमें ध्यान लगाकर समाधि की अवस्था तक पहुंचना ही उपासना का वास्तविक प्रयोजन है।

उपासना कैसे करें–

महर्षि द्वारा ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में उपासना पद्धति निम्न प्रकार बताई गई है– '' अब जिस रीति से उपासना करनी चाहिए, सो आगे लिखते हैं– जब–जब मनुष्य लोग ईश्वर की उपासना करना चाहें, तब–तब इच्छा के अनुकूल एकान्त स्थान में बैठकर, अपने मन को शुद्ध और आत्मा को स्थिर करें तथा सब इन्दिय और मन को सच्चिदानन्दादि लक्षण वाले अनतर्यामी अर्थात् सब में व्यापक और न्यायकारी परमात्मा की ओर अच्छी प्रकार से लगाकर, सम्यक चिन्तन करके, उसमें अपने आत्मा को नियुक्त करें। फिर उसी की स्तुति, प्रार्थना और उपासना को बारंबार करके अपने आत्मा को भली भांति उसमें लगा दें।' इसके बाद महर्षि ने पतंजलि मुनि के योगशास्त्र और उन सूत्रों पर वेदव्यास मुनि के भाष्य के प्रमाणों का उल्लेख किया है जो संक्षिप्त रूप से निम्न प्रकार हैं–

(१) चित्त की वृत्तियों को सब बुराइयों से हटा के शुभ गुणों में स्थिर करके मोक्ष को प्राप्त करने को 'योग' कहते हैं। और 'वियोग' उसको कहते हैं कि परमेश्वर और उसकी आज्ञा से विरुद्ध बुराइयों में फंस के उससे दूर हो जाना।

(२) जैसे जल के प्रवाह को एक ओर से दृढ़ बांध से रोक देते हैं, तब वह जिस ओर नीचा होता है, उस ओर चल के वहीं स्थिर हो जाता है, इसी प्रकार मन की वृत्ति भी जब बाहर से रुकती है, तब परमेश्वर में स्थिर हो जाती है। एक तो चित्त की वृत्ति को रोकने का यह प्रयोजन है।

(३) उपासक योगी और संसारी मनुष्य जब व्यवहार में प्रवृत्त होते हैं, तब योगी की वृत्ति तो सदा हर्षशोकरहित, आनन्द से प्रकाशित होकर उत्साह और आनन्दयुक्त रहती है और संसार के मनुष्य की वृत्ति सदा हर्षशोकरूप दुःखसागर में डूबी रहती है। उपासक योगी की तो ज्ञानरूप प्रकाश में सदा बढ़ती रहती है और संसारी मनुष्य की वृत्ति सदा अन्धकार में फंसती जाती है।

(४) सभी मनुष्यों में पांच प्रकार की वृत्तियां क्लिष्ट और अक्लिष्ट भेद से होती हैं। ये वृत्तियां हैं– प्रमाण, विपर्य्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति। इन वृत्तियों को अभ्यास और वैराग्य अर्थात् सब बुरे कामों और दोषों से अलग रहकर ही इन्हें रोक कर उपासना योग में प्रवृत्त हुआ जा सकता है।

ब्रह्मयज्ञ या संध्या नित्य सांय और प्रातः सभी आर्यों/श्रेष्ठ जनों द्वारा किया जाना आवश्यक है। इसमें भी केवल मंत्र पाठ और अर्थ विचार तक ही सीमित न रहना चाहिए अपितु महर्षि द्वारा बताए गए उक्त योग मार्ग पर चलना भी अत्यन्त आवश्यक है। कुछ समय मौन रह कर आत्मा और परमात्मा के गुणों का चिन्तन करते हुए ध्यान लगा कर यदि सम्भव हो सके तो समाधि अवस्था तक पहुंचने का प्रयास करना चाहिए। सामान्य साधकों के लिए बिना किसी गुरु का सानिध्य प्राप्त किए उपासना के इन कठिन मार्गों पर चलना आसान नहीं है। समय–समय पर आर्यसमाज द्वारा संचालित कई संस्थानों में साधकों के मार्गदर्शन हेतु शिविर लगा कर प्रशिक्षिण दिया जाता है, इनमें **वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून** भी एक प्रमुख संस्थान है।

संसार में बार–बार जन्म लेना बुद्धिमता नहीं है, क्योंकि संसार में अनेक दुःख भोगने पड़ते हैं। मोक्ष में रहना बुद्धिमत्ता है, क्योंकि मोक्ष में केवल सुख ही मिलता है, दुःख बिल्कुल नहीं।

ओ३म्

––वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून के ग्रीष्मोत्सव का समापन––

'आर्यसमाज अज्ञान, अन्धविश्वास व कुरीतियों को भस्म करने वाली आग है: स्वामी आर्यवेश'

– मनमोहन कुमार आर्य

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून का पांच दिवसीय ग्रीष्मोत्सव हर्षोल्लासपूर्वक सम्पन्न हुआ। समापन समारोह रविवार 10 मई, 2015 को हुआ जिसके मुख्य अतिथि सार्वदेशिक

आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी थे। देशभर से बड़ी संख्या में पधारे आश्रम प्रेमी आर्यजनों को सम्बोधित करते हुए स्वामी आर्यवेश जी ने कहा कि यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे तपोवन आश्रम, देहरादून में आने का अवसर मिला है। आज की परिस्थिति में देश में यदि कोई आशा की किरण दिखाई देती है तो वह आर्यसमाज है। आर्य समाज एक आशावादी संगठन है, यह कभी निराश नहीं हुआ। देश की गुलामी के दिनों में आर्यसमाज का आविर्भाव हुआ और थोड़े से समय में ही यह विश्व भर में विख्यात हो गया। अमेरिका के एक विद्वान ने महर्षि दयानन्द के ही समय में उनके बारे में लिखा था कि मुझे आर्य समाज के रूप में एक आग दिखाई देती है जो देश के सभी अन्धविश्वास, अज्ञान व कुरीतियों को दूर कर रही है। उन्होंने कहा कि आर्यसमाज की आग इसकी विचारधारा की आग है। इस आग में आर्यसमाज के नेताओं का बलिदान व देश की धार्मिक व सामाजिक उन्नति के लिए इनका समर्पण भी है। पूरी दुनिया में केवल एक ही संस्था है जो यह घोषणा करती है कि संसार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक एवं सामाजिक उन्नति करना। वसुधैव कुटुम्बकम के विचार को केन्द्र में रखकर महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना की थी। आर्यसमाज मानव मात्र के उपकार व कल्याण की बातें सोचता है। नई पीढ़ी को संस्कारित करना आज की मुख्य आवश्यकता है। ईश्वर को क्यों मानें, वेद ईश्वरीय ज्ञान है, यज्ञ क्यों करें आदि विषयों को युक्ति व प्रमाणों से नई पीढ़ी को समझाना होगा। यदि हम विफल रहे तो आने वाला समय बहुत खतरनाक होगा। अपने विस्तृत व्याख्यान में विद्वान नेता ने अनेक विषयों को सम्मिलित किया और उन पर सारगर्भित, सामयिक एवं प्रासंगिक विचार प्रस्तुत किये। स्वामीजी के इस पूरे सम्बोधन को यूट्यूब पर लिंक https://www.youtube.com/ watch?v=62waFrMZu6s पर देखा व सुना जा सकता है।

आर्यजगत के विख्यात विद्वान आचार्य उमेशचन्द कुलश्रेष्ठ ने अपने ओजस्वी सम्बोधन में कहा कि आर्यसमाज का दृष्टिकोण केवल वेद और यज्ञ तक सीमित नहीं है अपितु जीवन के सभी महत्वपूर्ण पहलुओं पर भी इसका व्यापक दृष्टिकोण है। आपने राष्ट्र रक्षा यज्ञ की चर्चा की और कहा कि इसकी आवश्यकता क्यों

है व श्रोता इसमें कैसे सहयोग कर सकते हैं? उन्होंने कहा कि **राष्ट्र रक्षा का पहला आधार भाषा होती है। देश में एक समान भाषा के न होने से मनुष्यों को संगठित नहीं किया जा सकता। देश को संगठित करने व इमोशनल इंटिग्रेशन के लिए एक भाषा का होना आवश्यक है। उन्होंने कहा कि यदि एक भाषा नहीं होगी तो एक कोने का व्यक्ति दूसरे कोने के व्यक्ति से जुड़ नहीं सकता।** महर्षि दयानन्द के जीवन का उदाहरण देकर विद्वान वक्ता ने कहा कि यद्यपि वह गुजराती थे, उनकी मातृ भाषा गुजराती थी, संस्कृत के वह देश के सबसे बड़े विद्वान थे, संस्कृत को वह धारा प्रवाह सरलता से बोलते थे फिर भी राष्ट्रीय एकता के लिए उन्होंने इन भाषाओं के स्थान पर हिन्दी को महत्व दिया क्योंकि हिन्दी में ही राष्ट्रभाषा होने की शक्ति व सामर्थ्य है। विद्वान वक्ता का सम्बोधन अत्यन्त प्रभावशाली था जिसे श्रोताओं ने बहुत पसन्द किया। उन्होंने इस विषय से सम्बन्धित अनेक प्रकरणों को भी प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत कर श्रोताओं को मन्त्रमुग्ध कर दिया।

आचार्य आशीष दर्शनाचार्य ने कहा कि सत्य का प्रचार इस प्रकार से होना चाहिये कि सत्य सबके हृदयों में प्रवेश करता हुआ स्थिर हो जाये। आन्तरिक प्रचार की अवहेलना कर बाहरी प्रचार करने के कारण हम लोग पिछड़ गये हैं। हमें दूसरों का जीवन बनाना है तथा समाज में क्रान्ति करनी है। उन्होंने कहा कि क्रान्ति का आरम्भ अन्दर से होता है। यदि हम अपने व दूसरों के अन्दर क्रान्ति को प्रज्जवलित करने के साथ अपने लोगों के अन्दर प्रचार व प्रसार करने की भावना रखते हैं तभी आर्य समाज को सफल कर सकते हैं। आर्यजगत के विद्वान श्री आशीष आर्य ने कहा कि यदि हम तर्क को आधार बनाकर अपने बच्चों को ईश्वर संबंधी बातें बतायेंगे तो उनकी ईश्वर को मानने में स्वीकार्यता अधिक होगी। अपने विस्तृत सम्बोधन में विद्वान वक्ता ने अनेक विषयों पर प्रकाश डाला। समापन समारोह में अनेक अन्य वक्ताओं ने भी अपने विचार प्रस्तुत किए जिनमें डा. वीरपाल विद्यालंकार, गाजियाबाद, आचार्य डा. धनंजय, गुरूकुल पौंधा, प्राकृतिक चिकित्सक डा. विनोद कुमार शर्मा, द्रोणस्थली कन्या गुरूकुल की आचार्या डा. अन्नपूर्णा जी सम्मिलित थी। श्री उदयवीर सिंह आर्य मथुरा, श्री रूहेल सिंह आर्यवीर आदि के प्रभावशाली भजनों सहित द्रोणस्थली कन्या गुरूकुल की छात्राओं ने समूह भक्तिगीत भी प्रस्तुत किया।

ग्रीष्मोत्सव के पांचों दिन स्वामी दिव्यानन्द जी द्वारा प्रातः 5:00 बजे से 6:30 बजे तक योग प्रशिक्षण का कार्यक्रम हुआ जिसके बाद सामवेद पारायण यज्ञ किया जाता रहा। शुद्ध मन्त्रोच्चार महर्षि दयानन्द आर्ष ज्योतिर्मठ गुरूकुल पौंधा, देहरादून के

ब्रह्मचारियों ने किया। यजमानों व धर्मप्रेमी आगन्तुकों ने सामवेद पारायण यज्ञ में श्रद्धापूर्वक आहुतियां समर्पित कीं। श्रद्धालुओं की अत्यधिक संख्या के कारण मुख्य यज्ञशाला सहित पांच वृहत यज्ञकुण्डों में यज्ञ किया जाता था। यज्ञ की पूर्णाहुति के अवसर पर यज्ञ के ब्रह्मा स्वामी दिव्यानन्द जी ने कहा कि यज्ञ त्याग का प्रतीक है। प्रत्येक याज्ञिक को त्याग की भावना बनानी चाहिये। उन्होंने प्रार्थना

करते हुए कहा कि ईश्वर की कृपा से सभी यज्ञ में भाग लेने वाले व्यक्तियों की कामनायें पूर्ण हों। यज्ञ करने वालों को यज्ञ में की जाने वाली प्रार्थनाओं के अनुसार ही अपना जीवन भी बनाना चाहिये। आपने सभी यज्ञ के सहभागियों की ओर से ईश्वर से सभी की सुख, समृद्धि और मोक्ष की प्राप्ति के लिए प्रार्थना की। कार्यक्रम का संचालन कर रहे श्री उत्तम मुनि जी ने कहा कि यज्ञ की भावना **'इदन्न न मम'** अर्थात् संसार में मेरा अपना कुछ भी नहीं है, जो है वह सब ईश्वर का है, ऐसी भावना सभी यजमानों व धर्मप्रेमियों को बनानी चाहिये। उन्होंने कहा कि इस भावना को जीवन में चरितार्थ करना है। यज्ञ की पूर्णाहुति के बाद स्वामी दिव्यानन्द जी ने यज्ञ में भाग लेने वाले सभी बन्धुओं को आशीर्वाद प्रदान किया। उत्सव के सभी दिनों में यज्ञ के बाद आधा घण्टे मथुरा से पधारे प्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री उदयवीर आर्य के ईश्वर भक्ति, देशभक्ति तथा आर्य समाज से सम्बन्धित भजन होते थे। सभी दिवसों पर आगरा से पधारे आर्य विद्वान आचार्य श्री उमेश चन्द कुलश्रेष्ठ जी के प्रेरक एवं ओजस्वी प्रवचन भी हुए जिनसे श्रोता लाभान्वित हुए। आर्य विद्वान श्री कुलश्रेष्ठ जी का एक प्रवचन यूट्यूब पर उललब्ध है जिसे लिंक https://www.youtube.com/watch?v=-_oyo RSN0nA&feature=youtu.be पर देखा व सुना जा सकता है। उत्सव की अवधि में युवक–युवती सम्मेलन एवं महिला सम्मेलन भी सम्पन्न किये गये। 9 मई, 2015 को तपोवन की पहाड़ियों में भी सत्संग सम्पन्न हुआ। यह वही स्थान है जहां पर महात्मा आनन्द स्वामी, स्वामी योगेश्वरानन्द, महात्मा प्रभु आश्रित जी आदि अनेक महात्माओं ने तपस्यायें व साधनायें की हैं। उत्सव के प्रथम चार दिन सायं 3:30 बजे से सायं 5:15 बजे तक वेद पारायण यज्ञ चलता रहा जिसके पश्चात 5:15 से 6:30 बजे तक भजन व प्रवचन होते थे। रात्रि 8:30 से 9:30 बजे आचार्य आशीष जी श्रद्धालुओं की शंकाओं का समाधान करते थे। अनेक आर्य विद्वानों सहित आर्यनेता श्री गोविन्द सिंह भण्डारी प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तराखण्ड एवं इसी सभा के मन्त्री दयाशंकर काण्डपाल जी को रविवारीय आयोजन में सम्मानित किया गया। तपोवन विद्या निकेतन के निर्धन विद्यार्थियों की सहायतार्थ लगभग पचास हजार रूपये की धनराशि लोगों ने दान दी। अनेक व्यक्तियों ने विद्यालय में पढ़ने वाले कई निर्धन बच्चों के स्वमुख से उनकी पारिवारिक व आर्थिक दयनीय स्थिति सुनकर उनकी शिक्षा का व्यय स्वयं वहन करने के वचन दिये। अनेक पुस्तक विक्रेता, यज्ञ के पात्र, सीडी, औषधि आदि के विक्रेता भी आयोजन में पधारे थे। देश भर से बड़ी संख्या में साधकों की उपस्थिति में यह आयोजन पूरी सफलता से सम्पन्न हुआ। पांचों दिन सभी आगन्तुकों के निवास व भोजन की व्यवस्था आश्रम की ओर से की गई थी। आश्रम के यशस्वी, दानी व स्वभाव से विनम्र अध्यक्ष श्री दर्शनकुमार अग्निहोत्री एवं यशस्वी मंत्री इं. प्रेम प्रकाश शर्मा जी के पुरूषार्थ, सत्यनिष्ठा व तत्परता से किये गये कार्यों से ग्रीष्मोत्सव पूरी सफलता से सम्पन्न हुआ।

पताः 196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोनः 09412985121

मनुष्य अविद्या को उखाड़कर, पूर्ण बुद्धिमान होकर मोक्ष में जाकर पूर्ण सुख भोगता है।

ओ३म्

'महात्मा प्रभु आश्रित का आदर्श जीवन और उनके कुछ प्रेरक विचार'

मनमोहन कुमार आर्य

महात्मा प्रभु आश्रित जी आर्यसमाज के उच्च कोटि के साधक व वैदिक विचारधारा मुख्यतः अध्यात्म एवं यज्ञादि के प्रचारक थे। उनका जन्म 13 फरवरी, 1887 को जिला मुजफ्फरगढ़ (पाकिस्तान) के जतोई नामक ग्राम में श्री दौलतराम जी के यहां हुआ था। महात्मा जी के ब्रह्मचर्य आश्रम का नाम श्री टेकचन्द था। वानप्रस्थ आश्रम की दीक्षा लेने पर आपने महात्मा प्रभु आश्रित नाम धारण किया। यज्ञ और वैदिक भक्तिवाद के प्रति आपकी गहरी श्रद्धा थी। **आपने वैदिक भक्ति साधन आश्रम, रोहतक की स्थापना की तथा यज्ञ, भक्ति तथा उपासना का गहन प्रचार किया।** 16 मार्च सन, 1967 को आपका निधन हुआ। आपने प्रभूत मात्रा में धार्मिक साहित्य का सृजन किया। आपके द्वारा प्रणीत पुस्तकों की संख्या लगभग 6 दर्जन है। आपकी कुछ रचनायें हैं, सन्ध्या सोपान, यज्ञ रहस्य, अध्यात्म सुधा, आध्यात्मिक अनुभूतियां, अध्यात्म–जिज्ञासा, हवन मंत्र, गायत्री रहस्य, गायत्री कुसुमांजलि, कर्म–भोग चक्र, पथ प्रदर्शक, पृथिवी का स्वर्ग, सप्त रत्न, सप्त सरोवर, दुर्लभ वस्तु, दिव्य पथ, दृष्टान्त मुक्तावली, जीवन चक्र, प्रभु का स्वरूप, भाग्यवान गृहस्थी, अमृत के तीन घूंट, डरो वह बड़ा जबरदस्त है, साकार पूजा, आत्म चरित्र आदि। स्वामी विज्ञानानन्द सरस्वती जी ने आपका जीवन चरित 3 खण्डों में लिखा है।

अपनी सन्ध्या–सोपान पुस्तक में आपने एक प्रश्न कि मन में आई पाप–वृत्ति को कैसे दूर भगायें, इस का समाधान प्रस्तुत करते हुए कहा है कि पाप–वृत्ति ऐसे सामने आया करती है जैसे चोर–डाकू संभल– संभलकर आता है। यदि घर वाला सावधान न हो और बल न रखता हो तो लूटा और पीटा जाता है, किन्तु यदि घरवाला तुरन्त अपना बल दिखलाये तो चोर–डाकू दुर्बल हो जाते हैं और घर वाले के बल का अनुमान कर लेते हैं। यदि उसे अपने से अधिक चैतन्य पाते हैं तो तुरन्त भाग जाते हैं, नहीं तो सामने डटे रहते हैं। नितान्त यही दशा साधक के साथ पाप–वृत्ति के सामने हुआ करती है। अतः जब पाप–वृत्ति सामने आये तो साधक चौकस होकर कड़ककर बोले – **'अपेहि मनसस्पतेऽपक्राम परश्चर। परो निर्ऋत्या आ चक्ष्व बहुधा जीवतो मनः।।' (ऋग्वेद 10/164/1)** इस मन्त्र में ईश्वर मनुष्यों को प्रार्थना के लिए प्रेरित कर कहते हैं कि **'हे मन को पतित करने वाले कुविचारों, दूर हो जाओ। दूर भागो। परे चले जाओ। दूर के विनाश को देखो। जीवित मनुष्य का मन बहुत सामर्थ्य से युक्त है।'** एक अन्य मन्त्र भी पापवृत्ति को हटाने की प्रेरणा करता है। मन्त्र हैः **'परोऽपेहि मनस्पाप, किमशस्तानि भांससि। परेहि न त्वा कामये, वृक्षां वनानि सं चर, गृहेशु गोशु मे मन।।' (अथर्ववेद 6/45/10) मन्त्रार्थः**

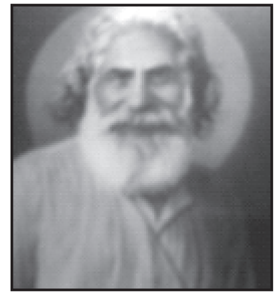

'हे मन के पाप दूर हट जा। क्यों तू बुरी बातें बताता है? हट जा। मैं तुझको नहीं चाहता, वनों में व वृक्षों में जाकर फिरता रह। मेरा मन घर में और गौ आदि पशुओं की पालना में है।' महात्मा जी बताते हैं कि मन्त्रस्थ विचार कि **'दूर के विनाश को देखो'** का तात्पर्य यह है कि उस बुरे विचार से भविष्य में होने वाली हानि का विचार कर उसका निवारण करना है। जो व्यक्ति साधना नहीं करता उसको यह बात समझ में नहीं आती है। जब मनुष्य आध्यात्मिक विद्या का विद्यार्थी बनता है, तो वह साधनाएं करता है। उन साधनाओं और तप के प्रताप से उसके शीशे साफ होने लगते हैं। इन शीशों से वह देखता है। **यह शीशे दो हैं—एक बुद्धि का, दूसरा मन का। बुद्धि का शीशा तो दूरबीन है (दूर की चीज को देखने वाला) और मन का शीशा खुर्दबीन (छोटी से छोटी चीज को देखने वाला), अतः साधक जब प्रत्येक कार्य को इन शीशों से देखता है, तो उसे एक छोटे से छोटा पाप भी मनरूपी लघुदर्शी यन्त्र से बड़ा भारी दिखाई देने लगता है।** उस पाप की गति और बढ़ाने का अनुमान वह उसकी हलचल से लगाता है। फिर जब दूरदर्शी यन्त्र लगाकर उसे देखता है, तो उसका भयंकर रूप उसके सामने आ जाता है और वह सोचता है— **1— इस पाप का बदला पाने के लिए एक तो मुझे जन्म अवश्य लेना पड़ेगा, 2— इस पाप के कुसंस्कार से दूसरे जन्म में भी मुझे वैसा ही पाप फिर घेरेगा। 3— फिर प्रकटतः उस पाप के कारण से दण्डित हो जाऊंगा और मेरा जीवन कष्ट में फंस जायेगा। 4— मेरे माता—पिता यदि धनाढ्य हुए, सम्मानित हुए तो उनके धन—माल का सर्वनाश होगा, उनकी बड़ी बदनामी होगी और मेरे माथे पर कलंक का टीका रहेगा। 5— यदि मेरी आयु थोड़ी हुई तो माता—पिता के सामने ही भरी जवानी में मेरे मरने का उन्हें अति दुःख होगा। 6— यदि मेरा जीवन उस जन्म में और भी भ्रष्ट तथा पतित हो गया, तो फिर मुझे अनेक जन्म लेने पड़ेंगे। 7— यदि मेरे जन्म का वायुमण्डल अच्छा हुआ और मेरी आयु कम हुई तो मुझे यह खेद रहेगा कि मैं कुछ कमाई नहीं कर सका।** इसका निष्कर्ष बताते हुए महात्मा प्रभु आश्रित जी कहते हैं कि **इस प्रकार साधक जब विचारपूर्वक अपना जीवन व्यतीत करता है, तो उपासना से स्वच्छ किये हुए इस मनरूपी लघुदर्शी यन्त्र और ज्ञान से पवित्र किये हुए बुद्धि रूपी दूरदर्शी यन्त्र के प्रयोग से वह पाप से दूर और पुण्य के समीप रहकर अपने जीवन—पथ पर चलता जाता है और उन्नत होता जाता है।**

महात्मा प्रभु आश्रित जी ने एक स्थान पर इस सृष्टि व प्रकृति की विचित्र लीलाओं का भी चित्रण किया है जिस पर प्रत्येक साधक को विचार करना चाहिये। इससे ईश्वर के प्रति प्रीति व कुछ—कुछ वैराग्य की उत्पत्ति जीवन में हो सकती है। उनके अनुसार, **1— प्राणी भी असंख्यात हैं और योनियां भी असंख्य। क्या विचित्रता है कि एक का रूप दूसरे से नहीं मिलता? जब से सृष्टि चली आती है, 1 अरब 96 करोड़ 8 हजार वर्ष से भी ऊपर हो गए, परन्तु आज तक एक भी सूरत दूसरे से नहीं मिली। प्रभु कैसे और किस बुद्धि से ये बनाते हैं, 2— प्रभु ने धरती बनाई परन्तु उसके खण्ड—खण्ड का प्रभाव भिन्न—भिन्न है। कहीं सोना, कहीं चांदी, कहीं लोहा, कहीं पारा, कहीं सोडा, कहीं खान होती है। कोई धरती अन्न की, कोई बाग की, कोई चाय—काफी की, कोई पथरीली, कोई मैदानी है। असंख्य खानें**

हैं, कोई लवण, कोई नीलम, कोई हीरे पैदा करती है, कहीं नारियल उगते हैं और कहीं आम। 3– जल है तो उनका प्रभाव अलग–अलग। कोई मीठा, कोई तेलिया, किसी से अतिसार (दस्त का रोग), किसी से कब्ज तथा किसी से ज्वर, किसी से स्वास्थ्य–लाभ होता है। 4–रंग बनाये तो नाम एक, किन्तु रूप एक–समान नहीं। पीले रंग को ही लो। आम, सन्तरा, नींबू, गलगल, जामन, आंवला, आलू बुखारा, किसी का स्वाद भी दूसरे से नहीं मिलता। 5–करेला कड़वा, बीज फीका, नीम कड़वी, निम्बोली मीठी, नींबू खट्टा, बीच कड़वा, पीलू मीठे, बीज कड़वा। 6–सन्तरे की बनावट तथा उत्पत्ति देखो। बीज भवेत, डंडी मटियाली, पत्ते हरे, फूल भवेत और मनोहर सुगन्धवाले, छिलका पीला, फांकें गुलाबी, एक–एक सन्तरे में बारह डलियां और एक–एक फांक में तीन–तीन बीज, एक–एक सन्तरे में 36 बीज। 7–अनार की गुधावट देखो, कैसी बंधी हुई है। एक दो दानों को निकाल लो तो बड़े–से–बड़ा कारीगर वैज्ञानिक भी उसे फिर वहां नहीं जमा सकता। 8–गुलाब के फूल में सुगन्धि, परन्तु पत्ते, डंडी और बीज में कुछ भी नहीं। 9– माता के गर्भ में बालक कैसे रहता है और कैसे बढ़ता है? कैसे उसका पालन–पोषण होता है? फिर किस प्रकार गर्भ–गुफा से इतना बड़ा बालक निकल आता है? बलिहार, बलिहार। 10– मकड़ी अपने ही अन्दर से कैसा महीन तार निकालकर किस प्रकार जाल बनाती है? तथा 11– शरीर की आन्तरिक लीला भी प्रभु ने कैसी विचित्र रची है। मनुष्य एक पदार्थ को भी अनेक नहीं बना सकता, किन्तु प्रभु की लीला देखो! मनुष्य अन्न खाता है तो अन्दर जाकर उस अन्न का क्या–क्या बन जाता है। फिर रंग भिन्न–भिन्न। हड्डी, मांस, रूधिर, मज्जा, चर्बी, खाल, नाखून, बाल, वीर्य, थूक, खंखार आदि। ऐसी शरीर व प्रकृति संबंधी अनेक आश्चर्यचकित करने वाली विचित्रताओं का अन्यत्र भी महात्माजी ने वर्णन किया है। हम निवेदन करेंगे कि हमारे सुहृद पाठक वैदिक भक्ति साधन आश्रम, आर्यनगर, रोहतक–124001 दूरभाषः 09810033799/01262253214 से महात्मा जी का साहित्य मंगाकर तथा इसे पढ़कर अपने जीवन का कल्याण करें व लाभ उठायें।

महात्मा जी के जीवन व व्यक्तित्व के बारे में हमारे एक मित्र स्वर्गीय श्री वेदप्रकाश जी हमें बताया करते थे कि एक दम्पत्ति श्री गणेश दास कुकरेजा और उनकी देवी श्रीमति शान्ति देवी महात्मा जी के भक्त वा शिष्य थे। महात्मा जी द्वारा दैनिक यज्ञ की प्रेरणा किए जाने पर उन्होंने कहा कि हमारी आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं कि हम यज्ञ की सामग्री आदि पदार्थ खरीद सकें। महात्मा जी ने प्रेरणा की कि आप प्रयास करें, प्रभु सब प्रबन्ध कर देंगें। श्री गणेश दास जी ने प्रयास किया और लाहौर में 13 जनवरी, 1939 से दैनिक यज्ञ करना आरम्भ कर दिया। इसके बाद आप मृत्यु पर्यन्त यज्ञ करते रहे जिसका निर्वहन उनके सुयोग्य पुत्र श्री दर्शनलाल अग्निहोत्री अद्यावधि कर रहे हैं। यह भी उल्लेखनीय है कि आपके यहां 13 जनवरी, 1939 मकर संक्रान्ति के दिन यज्ञ की जो अग्नि महात्मा जी की प्रेरणा से प्रज्जवलित हुई थी वह आज तक निरन्तर अबाधित एवं प्रज्जवलित है। आपके परिवार ने उसे बुझने नहीं दिया। श्री गणेश दास कुकरेजा आर्यसमाज में श्री गणेशदास अग्निहोत्री के नाम से प्रसिद्ध हुए। आपने

सभी धार्मिक संस्थाओं को दिल खोलकर दान किया। यह मुख्य बात बताना भी उपयोगी होगा कि जब श्री गणेशदास जी ने यज्ञ आरम्भ किया तो आपके पास यज्ञ करने के लिए धन नहीं था। कुछ ही समय बाद आप फर्नीचर के उद्योग से जुड़कर उद्योगपति बने और अर्थाभाव हमेशा के लिए दूर हो गया। आर्यजगत के विद्वान आचार्य उमेशचन्द कुलश्रेश्ठ कहते हैं कि यज्ञ करने वाला समृद्ध होता है और उसकी वंशवृद्धि चलती रहती है, उसका वंशच्छेद नहीं होता। एक वार्तालाप में श्री दर्शनकुमार अग्निहोत्री जी ने हमें बताया कि अगस्त 1947 में पाकिस्तान बनने पर वहां से लोग अपनी बहुमूल्य वस्तुएं लेकर आये थे परन्तु हमारे माता–पिता सब कुछ वहीं छोड़कर केवल यज्ञकुण्ड व उसकी अग्नि को सुरक्षित भारत लाये थे जो आज तक निर्बाध रूप से प्रज्जवलित है।

लेख को समाप्त करने से पूर्व हम वैदिक भक्ति साधन आश्रम, रोहतक (हरियाणा) और वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून के प्रधान और प्रमुख समाजसेवी श्री दर्शनकुमार अग्निहोत्री जी के महात्माजी के व्यक्तित्व पर विचार प्रस्तुत करने का लोभसंवरण नहीं कर पा रहे हैं। वह लिखते हैं–**'आधुनिक युग के यशस्वी सन्त प्रातः स्मरणीय महात्मा प्रभु आश्रित जी महाराज समस्त मानव जाति के लिए एक वरदान सिद्ध हुए हैं। पूज्य गुरूदेव परम त्यागी, तपस्वी, कर्मठ कर्मयोगी एवं वैदिक मिशनरी थे। उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन वेद–यज्ञ–योग के प्रचार–प्रसार में लगा दिया। परमात्मा की कृपा से आपकी प्रेममयी सुमधुर वाणी को जिसने सुना उसका कायाकल्प हो गया। पूज्यपाद गुरूदेव जी परमात्मा व ब्रह्म के अनन्य उपासक, मनसा–वाचा–कर्मणा सर्वथा पवित्र निष्काम कर्मयोगी थे। सदैव लोकैषणा, पुत्रैषणा व वित्तैषणा से रहित होकर उन्होंने आखिर में मोक्षपद को प्राप्त किया।'** हम आशा करते हैं कि पाठक इस लेख के विचारों से लाभान्वित होंगे।

सूचना

पवमान पत्रिका के सुविज्ञ पाठको को सूचित किया जाता है कि सितम्बर 2014 से पत्रिका का वार्षिक मूल्य 150 रुपये हो गया है। जिन ग्राहकों ने पत्रिका शुल्क जमा नहीं किया है वह पिछले वर्षों सहित इस वर्ष का शुल्क शीघ्र जमा कर दें। यह अन्तिम अनुरोध है अगले माह की पवमान पत्रिका केवल उन्हीं ग्राहकों को भेजी जाएगी जिनके द्वारा पत्रिका का शुल्क जमा कर दिया गया हो। आप कैनरा बैंक, क्लाक टावर, देहरादून (IFSC code : CNFB0002162) खाता 'पवमान' खाता सं. 2162101021169 में शुल्क जमा करा सकते हैं। आश्रम के दूरभाष नं. 0135–2787001 पर सूचना प्राप्त होने पर आपके द्वारा जमा शुल्क की रसीद आपके पते पर भेज दी जायेगी। पत्रिका प्राप्त न होने पर इसकी सूचना आश्रम के ईमेल : vaidicsadanashram88@gmail.com अथवा श्री रमाकान्त कौशिक, मोबाईल नं. 8171619653 एवं श्री विनीत सचदेवा, मोबाईल नं. 9528033205 पर एसएमएस भेजने पर पत्रिका आपको पुनः भेज दी जाएगी। सूचनीय है कि पवमान पत्रिका के प्रकाशन पर प्रति माह लगभग 10 हजार रुपए की हानि हो रही है। आप समय पर पत्रिका का शुल्क जमा करके तथा विज्ञापन देकर इस हानि को कम कर सकते हैं। विज्ञापन के रेट प्रथम पृष्ठ पर दिये गये हैं।

चार पर हमेशा विश्वास रखें। माता, पिता, सच्चे गुरु और ईश्वर।
ये कभी धोखा नहीं देंगे। जो इनकी बात नहीं मानेगा, वह जरूर दुःखी होगा।

सुखी और स्वस्थ जीवन के लिए व्यायाम जरूरी

आचार्य भगवानदेव वेदालंकार

जीवन बड़ा अनमोल है। जीवन की रक्षा करना मनुष्य का प्रथम कर्त्तव्य है। जीवन है तो सब कुछ हे और यदि जीवन नहीं, तो कुछ भी नहीं। इसलिए जीवन की रक्षा के लिए व्यायाम करना बहुत जरूरी है। 'व्यायाम' जीवन को सही दिशा की ओर ले जाने वाली वह चाबी है, जिससे मनुष्य का जीवन सुखी और स्वस्थ होकर, धन्य हो सकता है।

व्यायाम का महत्त्व

संसार में अच्छा स्वास्थ्य अनमोल वस्तु है। व्यायाम स्वास्थ्य के लिए नितान्त जरूरी है। 'हेल्थ इज वेल्थ' अंग्रेजी की इस प्रसिद्ध कहावत के अनुसार स्वस्थ रहना बड़ा भारी वरदान है। जो व्यक्ति प्रतिदिन भोजन तो करता है, लेकिन व्यायाम नहीं करता है, वह एक दिन रोगी बन जाता है। बीमार होना पाप है। रोग और बीमारी को, व्यायाम रूपी सर्वोत्तम औषधि से ही दूर किया जा सकता है।

व्यायाम से चारों फलों की प्राप्ति

आयुर्वेद के महान् विद्वान् महर्षि चरक ने कहा है कि **'धर्मार्थ काम मोक्षाणाम् आरोग्यं मूलं उत्तमम्'** मानव जीवन के चार सर्वोत्तम फल हैं– 1. धर्म, 2. अर्थ, 3. काम और मोक्ष। इन चारों फलों की प्राप्ति का मूल आधार उत्तम स्वास्थ्य है और उत्तम स्वास्थ्य व्यायाम से ही सम्भव है। आगे कहा है कि **'शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्'** अर्थात् स्वस्थ शरीर द्वारा ही अपने समस्त धर्मों का पालन सम्भव है। 'शरीर' को ठीक रखना सबसे पहला कर्त्तव्य है। बड़ी प्रसिद्ध कहावत है– 'पहला सुख निरोगी काया' निरोगी व्यक्ति ही सुखी रहता है। स्वस्थ रहना सबसे बड़ा सुख है और बिना व्यायाम के स्वास्थ्य की रक्षा असम्भव है। स्वर्ग और नरक कहीं अन्यत्र नहीं हैं। स्वस्थ मनुष्य के लिए यह संसार ही स्वर्ग समान है। चाहे मनुष्य दरिद्र ही क्यों न हो, यदि वह पूर्ण स्वस्थ है तो वह धन के अभाव में भी धनवान् है क्योंकि स्वास्थ्य धन से बढ़कर कोई धन नहीं है।

व्यायाम करने से अनेक प्रकार के लाभ

आयुर्वेद विद्या के मर्मज्ञ महर्षि धन्वन्तरि जी ने अपने ग्रन्थ सुश्रुत संहिता में स्थान–स्थान पर व्यायाम की महिमा का उल्लेख किया है।

1. व्यायाम से सबसे प्रमुख लाभ शारीरिक विकास होता है। छोटे कद का व्यक्ति लम्बा हो सकता है। लम्बे कद का व्यक्ति सुडौल हो जाता है।
2. कुरूप व्यक्ति सुन्दर लगने लगता है। शरीर में कान्ति, सुन्दरता, चमक बढ़ जाती है। व्यायामशील व्यक्ति का 'व्यक्तित्व' आकर्षक प्रभावशाली हो जाता है।
3. शरीर में एक अग्नि होती है जिसे 'जठराग्नि' कहते हैं। व्यायाम करने से पाचन–शक्ति बढ़ती है। भूख खुलकर लगती है। कब्ज दूर हो जाती है। खाने की रुचि बढ़ती है।
4. व्यायाम करने से आलस्य दूर भागता है। बहादुरी, हिम्मत बढ़ती है। कमजोरी दूर हो जाती है। काम करने का साहस बढ़ता है।

सफलता उन्हीं लोगों को मिलती है, जो स्वयं पर विश्वास रखते हैं, कि हमारे अंदर परिस्थितियों से लड़ने की कुछ अधिक शक्ति है।

5. व्यायाम करने से शरीर में स्थिरता, दृढ़ता, मजबूती आती है। शरीर के अंग–प्रत्यंग पत्थर की तरह से दृढ़, मजबूत हो जाते हैं। किसी कवि ने व्यायाम के महत्व को निम्न पंक्तियों के माध्यम से व्यक्त किया है–

पत्थर सी हों मांस पेशियां,
लोहे से भुजदण्ड अभय।
नस–नस में हो लहर आग की,
तभी जवानी पाती जय।।

6. शरीर में हल्कापन आता है। मोटापा कम हो जाता है। महर्षि चरक लिखते हैं–

लाघवं कर्म सामर्थ्यं स्थैर्यं क्लेश सहिष्णुता।
दोष क्षयोग्नि वृद्धिश्च व्यायामादुपजायते।।
–चरक संहिता सूत्र स्थान अध्याय 7 श्लोक 31

अर्थात् व्यायाम करने से शरीर में लघुता, स्फूर्ति, हलकापन, फुर्तीलापन, कार्य–क्षमता, स्थिरता, कष्ट और दुःखों को सहने की शक्ति आती है। कुपित दोषों में वात, पित्त और कफ दोष सम रहते हैं और जठराग्नि की वृद्धि होती है।

7. व्यायामी व्यक्ति में बल, तेज, शक्ति बढ़ने से निर्भयता आती है। कायरता दूर चली जाती है। शत्रु भी उससे डरते हैं।

8. व्यायाम करने से छाती चौड़ी, उभरी हुई दिखलाई देती है। लम्बी, सुडौल और गठी हुई भुजाएं, कसी हुई पिण्डलियां, चढ़ी हुई जंघाएं, विशाल मस्तक, चमचमाता हुआ लाल मुखमण्डल उसके शरीर की शोभा को बढ़ाता है।

9. अधिक मोटापे की स्थूलता को दूर करने के लिए व्यायाम से बढ़कर और कोई औषधि नहीं है।

महात्मा गाँधी जी ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि वे पहले व्यायाम को व्यर्थ समझते थे पर बाद में उन्होंने व्यायाम को जीवन के लिए परमोपयोगी अनुभव किया।

10. व्यायाम से विचारों की शुद्धि

आर्यजगत् के प्रसिद्ध सन्यासी स्वामी ओमानन्द जी ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'ब्रह्मचर्य के साधन' में लिखा है कि 'व्यायाम प्रेमी के विचार सदैव शुद्ध और पवित्र रहते हैं। व्यायाम करने से कामवासना का वेग कितना भी प्रबल क्यों न हो, तत्काल ही दब जाता है। व्यक्ति दुष्ट–विचारों से सर्वथा दूर रहता है।

11. व्यायाम सद्‌गुणों का भण्डार है। ब्रह्मचर्य पालन में परम सहायक है। 'व्यायाम–प्रेमी' से दुःख बीमारी और रोग दूर भागते हैं। शरीर हृष्ट–पुष्ट बना रहता है।

12. 'साउण्ड माइण्ड इन ए साउण्ड बॉडी' अर्थात् स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन होता है। बुद्धि तीव्र होती है। इसीलिए प्राचीन काल के ऋषि–महर्षियों, विद्वान–आचार्यों ने भी व्यायाम के महत्व को जान लिया था। गुरुकुल के ब्रह्मचारियों को प्रतिदिन व्यायाम इसी भावना से कराया जाता है।

आश्रम द्वारा नव–निर्मित गौशाला में जल की समुचित व्यवस्था करने हेतु तपोभूमि से गौशाला तक पानी की पाईप लाईन डालने का कार्य अति आवश्यक हो गया है। पाईप लाईन डालने पर लगभग 2 लाख रुपए व्यय होने की संभावना है। दान–दाताओं से विनम्र अनुरोध है कि गौमाता के संरक्षण एवं पालन पोषण हेतु निर्मित गौशाला के लिए दान देकर पुण्य के भागी बनें। गौशाला हेतु दिया गया दान आयकर की धारा 80G के अधीन कर मुक्त है। अधिक जानकारी हेतु आश्रम के सचिव ई० प्रेमप्रकाश शर्मा, मोबाईल नं. 9412051586 पर सम्पर्क करें।

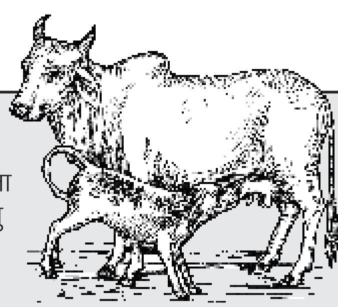

बोलने का उपक्रम तब करें जब आप समझें कि बोलने से कार्य सिद्ध होगा। –शेख सादी

कर्म का फल
(दृष्टान्त समुच्चय)

एक ब्राह्मण के इकलौते पुत्र को सर्प ने काट लिया और वह मर गया। सारे कुटुम्ब में हाहाकार मच गया। पड़ोसी भी बिना आँसू बहाये नहीं रहे। इतने ही में वहाँ बहेलिया आ गया, उसने हाहाकार सुनकर शोकाकुल लोगों से पूछा, ''आप लोग हाहाकार क्यों कर रहे हैं?'' उत्तर में कहा गया कि ब्राह्मण के बेटे को सर्प ने काट लिया है। फिर उसने पूछा, ''सर्प कहाँ पर निकला था?'' किसी ने जहाँ सर्प निकला था, वह स्थान बता दिया। बहेलिये ने सर्प को ढूँढकर पकड़ लिया और ब्राह्मण के पास लाकर कहने बोला, ''हे ब्राह्मण! इसी सर्प ने तुम्हारे पुत्र को काटा है। तुम इसका सिर कुचल दो।'' यह सुनकर ब्राह्मण ने उससे पूछा ''क्या इसको मारने से मेरा पुत्र जीवित हो जाएगा?'' उसने कहा, ''जीयेगा तो नहीं परन्तु तुम इससे बदला तो ले लोगे।'' ब्राह्मण ने इसे भी स्वीकार नहीं किया और कहा कि तुम इसे छोड़ दो जो होना था, सो हो गया। उस बहेलिये ने ये सोचकर कि यह ब्राह्मण तो मूर्ख सा प्रतीत होता है। यदि मैं इसको न मारूँ तो बड़ा अनर्थ होगा। ऐसा विचारकर जंगल में जाकर वह सर्प का सिर पत्थर पर रखकर स्वयं कुचलने को उद्यत हो गया। अपना सिर कुचला जाते देखकर सर्प बोला, ''भाई! तुम मुझे क्यों मारते हो?'' बहेलिया बोला– ''अरे मूर्ख! तुमने ब्राह्मण के इकलौते बेटे को काटकर मार दिया फिर पूछता है कि मैं तुम्हें मारता हूँ?''

सर्प ने कहा, ''भाई, तुम नहीं जानते। मेरा इसमें कोई दोष नहीं है। इसकी तो मृत्यु ही आ गई थी। यह दोष 'मृत्यु' का है।'' इतना यह सुनकर बहेलिये ने सोचा कि अगर मृत्यु मिल जाती तो उसका सिर कुचल देता, ताकि सारा संसार अमर हो जाये। इतने ही में मृत्यु भी वहाँ आ खड़ा हुआ और कहने लगा कि ''क्यों साँप! तुम मुझे क्यों दोष दे रहे हो? यह मुझे विदित नहीं। मैं तो समयानुसार हक जताता हूँ; इसका तो 'समय' हो गया था। इसका क्या दोष।'' यह सुनकर बहेलिया द्विविधा में पड़ गया, और सोचने लगा कि वाह! क्या खूब? यह भी दोष से पृथक् होना चाहता है। बहेलिये के दिल में यह विचार उत्पन्न हो ही रहा था कि 'समय' भी वहाँ आ विराजे और लगे मृत्यु को फटकारने– 'क्यों मृत्यु! सारे दोष हमारे ही सिर रखेगा, कुछ आगे की भी सुध है? देख! हम तो कर्मानुसार फल देते हैं। यदि कुछ दोष है तो वह है 'कर्मों' का।' यह सुन बहेलिये को ज्ञान हो गया और उसने सबको नमस्कार करके विदा किया। सर्प को भी छोड़ दिया।

फल–कर्म प्रधान विश्व कर राखा।
जो जस कीन तासु फल चाखा।।

वैदिक साधन आश्रम तपोवन द्वारा नर्सरी से कक्षा–8 तक तपोवन विद्या निकेतन का संचालन किया जा रहा है जिसमें वर्तमान में 250 निर्धन छात्र–छात्राएं शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। इस विद्यालय में बच्चों को नियमित पाठ्यक्रम के साथ–साथ वैदिक ज्ञान भी प्रदान किया जाता है तथा प्रत्येक शनिवार को आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य के प्रवचन के साथ–साथ सब बच्चे एवं अध्यापक–अध्यापिकाएं सामूहिक यज्ञ भी करते हैं। विद्यालय के बच्चों की योग्यता एवं प्रस्तुति से प्रसन्न होकर कुछ दानी भाई–बहन विद्यालय की सहायता के लिए आगे आए हैं और निम्न बन्धुओं ने तपोवन विद्या निकेतन की मदद करने का संकल्प किया। 1. श्रीमती सुन्दर शान्ता चड्ढा, नई दिल्ली–10,000 रु. प्रतिवर्ष, 2. श्री वेदभूषण रस्तोगी, गाजियाबाद–1000 रु. प्रतिमाह, 3. श्री केवल सिंह आर्य, पानीपत–500 रु. प्रतिमाह। आश्रम परिवार उपरोक्त सभी दान–दाताओं का हृदय से धन्यवाद अर्पित करता है।

परोपकार की भावना
(दयानन्द–दृष्टान्त–मणिका)

मनसि वचसि काये पुण्यपीयूषपूर्णास्त्रिभुवनमुपकार श्रेणिभिः प्रीणयन्तः।।

उपकारी जन मन, वचन तथा कर्म से दूसरों का कार्य करते हैं। वे पवित्र अमृत से भरे हृदय वाले दूसरों की प्रसन्नता के लिए कष्ट सहते हैं, ऐसे विरले ही सन्त होते हैं।

एक बार की बात है कि अध्ययन के समय दयानन्द गुरु विरजानन्द के कोपभाजक बन गये। घटना इस प्रकार की है कि गुरु विरजानन्द संन्यास आश्रम के नियमों का कठोरता से पालन करते थे, इसलिए केवल मिलने मात्र के लिए आये हुए उन सम्बन्धियों से नहीं मिलते थे जो संन्यास दीक्षा से पूर्व के थे।

एक दिन की बात है। गुरु विरजानन्द के गांव का रहने वाला कोई जन, गुरु विरजानन्द की कीर्ति सुनकर आया तथा विरजानन्द जी के शिष्यों से दर्शन करवाने के लिए अनुनय– विनय करने लगा। गुरु जी के द्वारा कठोरता से नियमपालन की बात सभी शिष्य जानते थे, इसीलिये सभी शिष्यों ने उस सज्जन की कामनापूर्ति के विषय में असमर्थता दिखाई।

वह सज्जन, दयानन्द के पास आया और प्रार्थना की, पहले तो दयानन्द ने भी असमर्थता दिखाई, परन्तु अभ्यागत महानुभाव ने दयानन्द के पैर पकड़कर सानुरोध इस प्रकार प्रार्थना की– **भगवन्! आप मेरे लिए गुरु विरजानन्द की प्रताड़ना को सहन कीजिये, मैं दूर से ही विरजानन्द जी के दर्शन करके चुपचाप लौट जाऊँगा, मुझ पर आपका यह महान् उपकार होगा।**

दयालु स्वभाव दयानन्द दयार्द्रचित्त होकर अपने साथ उस सज्जन को गुरु विरजानन्द के दुर्लभ–दर्शन का आनन्द लेकर दयानन्द के संकेत से धीरे–धीरे वापस लौटने लगे। दयानन्द भी उसी अभ्यागत के साथ विश्रामघाट पर जाने के लिए लौटने लगे परन्तु सीढ़ियों के बीच में ही किसी सहपाठी साथी द्वारा देख लिये गये। दयानन्द ने साथी को संकेत से गुरु जी को न बताने के लिए भी कहा परन्तु उस ईर्ष्यालु ने जाकर गुरु विरजानन्द को बताया कि– **गुरुवर! कोई अभ्यागत आज दयानन्द के साथ आपके पास आया था, वह पहनावे से पंजाब प्रान्त का रहने वाला लग रहा था।**

दूसरे शिष्य के मुख से यह रहस्य जानकर गुरु विरजानन्द ने दयानन्द की अतीव प्रताड़ना की तथा कहा– **मुझको अन्धा जानकर दयानन्द तुमने यह प्रवंचना की है, यहाँ से भाग जाओ, यहाँ मेरी सभा से तुम्हारा निष्कासन है।** दयानन्द ने पैर पकड़कर गुरु जी से क्षमा याचना की, परन्तु गुरु जी प्रसन्न नहीं हुए, कुछ दिनों के पश्चात् श्री नयनमुख महोदय ने विनयपूर्वक दयानन्द का गुरु विरजानन्द की सभा में प्रवेश करवाया।

शिक्षा–आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति सः पण्डितः विद्वान् व्यक्ति सभी प्राणियों में अपने समान ही सुख, दुःख तथा किसी वस्तु की प्राप्ति की उत्कट लालसा, तीव्र इच्छा का अनुभव करते हैं चाहे उसकी कामनापूर्ति हेतु स्वयं को कितना ही कष्ट, दुःख, अपमानादि सहन करना पड़े।

परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः, परोपकराय वहन्ति नद्यः।
परोपकाराय दुहन्ति गावः, परोपकारार्थमिदं शरीरम्।।

परोपकारी जन यह देखते हुए कि **वृक्ष अपना फल स्वयं नहीं खाते, दूसरों के खाने के लिए फल देते हैं। नदियाँ अपना पानी स्वयं नहीं पीती वरन् प्यासे की प्यास तथा सिंचाई आदि के प्रयोग के लिये देती हैं। गायें अपना दूध स्वयं न पीकर परोपकार के लिये देती हैं।** महात्मा अपना शरीर परोपकार के लिए लगा देते हैं।

मन शान्त करने का ढंग

विश्वाहा वयं सुमनस्य मानाः। ऋ० 6, 75, 8।
हम सदा सुखी एवं शान्त मन वाले हों।

किसी राजा ने मुनादी कराई कि हमारे यहां से बकरी ले जाओ, उसे पन्द्रह दिन अपने यहां ले जाकर रक्खो, खूब खिलाओ पिलाओ। सोलहवें दिन यहां लाओ। हम उसके सामने उसकी रुचि के अनुसार चारा रक्खेंगे, यदि उस पर मुँह न लगाया, न खाया, शान्त रही तो उसको हम दस सहस्त्र रुपये पुरस्कार देंगे।

इस लालच में बहुत से मनुष्य बकरी ले गये, एक बूढ़ा आदमी भी बकरी ले गया। सोलहवें दिन जब वे लोग बकरियां लाये, तब राजा ने बकरी के खाने योग्य अच्छे पत्ते–घास आदि रक्खे। जो भी बकरी आई वह किसी न किसी वस्तु पर मुँह मार लेती थी। सब बकरी वाले असफल रहे।

अन्त में जो बूढ़ा व्यक्ति बकरी ले गया था उसने घर जाकर ऐसा प्रबन्ध किया कि दिन में उसे घास चारा खिलाये, पर सायंकाल को जब घर में आये तब उसके सामने फिर घास–दाना पत्ते रक्खे, जब वह उन पर मुंह मारे तभी वह उसको लाठी मारे। इसी प्रकार 15 दिन करता रहा। दिन में पेट भर चारा खिलावे, फिर सायंकाल लाठी हाथ में रक्खे। तब बकरी समझ गई कि अब किसी वस्तु को मुंह लगाऊंगी तो मार पड़ेगी, इसलिये वह किसी वस्तु पर मन नहीं चलाती थी।

बकरी पूरी सध गई तब वह बूढ़ा बकरी को लाया और हाथ में लाठी ले रक्खी थी। सामने जो खाने की वस्तुएं रक्खी थीं। बकरी ने डर के मारे किसी वस्तु पर भी मुंह न मारा और जब उसे खड़ा किया तो वह जुगाली करने लगी। जब बकरी ने किसी भी वक्तु को नहीं देखा, मन नहीं चलाया, तब राजा ने सोचा यह बकरी रोगी प्रतीत होती है। डाक्टर को बुलाकर पूछा, डॉक्टर ने बकरी को देखा और कहा कि यह बकरी तो जुगाली कर रही है इसलिये स्वस्थ है, तब बूढे को पुरस्कार दे दिया। राजा के पूछने पर कि किस तरह इसे अभ्यास कराया है, उस बूढे ने सब बात–हाल बता दिया।

तात्पर्य यह है कि इसी प्रकार शरीर निर्वाह के लिये भरपेट भोजन दे देना तो उचित है परन्तु फिर जब कोई इन्द्रिय किसी विषय की इच्छा करे तो उस पर विचार रूपी लाठी लगावे, ऐसा करने से मन और इन्द्रियां शान्त होकर अपने वश में हो जायेगी।

मन पक्षी तब लग उड़ै विषय वासना माहि।
ज्ञान बाज की झपट में जब लग आया नाहिं।।
और भी

गिरते हैं ख्याल तो गिरता है आदमी।
जिसने इन्हें संभाला वह संभल गया।

विनम्र निवेदन

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन, देहरादून में पधारने वाले सभी भाई–बहनों से अनुरोध है कि वह अपने साथ आधार कार्ड/वोटर कार्ड की फोटोकॉपी अथवा आर्य समाज के प्रधान या मंत्री का पत्र लेकर आएं ताकि उन्हें आश्रम में उचित कमरे का आवंटन किया जा सके। प्रयास करें कि आश्रम में आने से पूर्व आश्रम के दूरभाष नं. 0135–2787001 पर सम्पर्क कर लें ताकि खाली कमरों की वास्तविक स्थिति का पता लग सके।

यज्ञ रहस्य

—प्रभु आश्रित महाराज

यज्ञ, यजनीय

जिस कार्य में दान, संगठन और देवपूजा हो उसे यज्ञ कहते हैं। यज्ञ के करनेवाले को यजमान कहते हैं। करानेवाले को पुरोहितं

यज्ञ क्यों किया जाता है? —अन्धकार, आपत्ति, दुःख और न्यूनता के नाश के लिए। अन्धकार तीन प्रकार का है— शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक। इसे विस्तृत अर्थों में लिया जावे तो आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक कहलाता है।

हिन्दुओं में यह प्रचलित लोकोक्ति है कि यज्ञ का देवता इन्द्र है, यज्ञ से इन्द्र प्रसन्न होता है और इसकी प्रसन्नता से सब कार्य पूर्ण कराए जा सकते हैं। इसका अभिप्राय यह है कि आधिदैविक जगत् में सूर्य ही इन्द्र है, जो रात्रि के कारण से अन्धकार हो या मेघों के कारण अन्धकार हो पर अन्तरिक्ष में सूर्य के उदय होने से या सूर्य की कृपा से वे दोनों प्रकार के अन्धकार नष्ट हो जाते हैं। जब आधिभौतिक जगत् में पापी (चोर, डाकू, कुकर्मी, व्यभिचारी) बढ़ जाएँ और अन्धेर मचा देवें, तब राजा (जिसे इन्द्र भी कहते हैं और यज्ञपति भी कहते हैं) के द्वारा उनका नाश कराया जाता है। आध्यात्मिक जगत् में आत्मा को इन्द्र कहते हैं। मनुष्य पर दिन—रात पाप (काम, क्रोध, लोभ, स्वार्थ) आक्रमण करते रहते हैं। इन्होंने अन्तःकरण में अन्धकार कर रखा है। अन्तःकरण अज्ञानावृत हो गया है। मनुष्य जानता है कि यह पाप है, नहीं करना चाहिए, तो भी वह रुक नहीं सकता।

साधक पुरुष इन्द्रियों को रोकता है, मन से विचारता है, बुद्धि से निश्चय करता है, फिर भी पाप के प्रलोभन में, पाप के पंजे में फँस ही जाता है। इसलिए जो यज्ञ करनेवाला यजमान होता है वह इस अन्धकार का नाश करने के लिए ही यज्ञ करता है और पुरोहित उसे कहता है—

ओम् उद्बुद्ध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्ते सꣳ सृजेथामयञ्च।

अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत।।

तब यजमान अग्निकुण्ड में अग्नि रख देता है। यह मत समझो कि "उद्बुद्ध्यस्वाग्ने" का मन्त्र केवल अग्नि को ही जगाने का है।

मैंने बतलाया है कि सब क्रियाएँ मनुष्य की शिक्षा के लिए हैं। वह शिक्षा आध्यात्मिक शिक्षा के प्रयोजन से दी जाती हैं, इसी से पुरोहित यजमान को बतला रहा है कि (उद्) उठ, श्रद्धा से उठ। क्यों उठ?— (प्रतिजागृहि) अर्थात् जगाओ। किसको जगाओ?— अग्नि को जगाओ। कौन—सी अग्नि को जगाओ?— (बुद्ध्यस्वाग्ने) चेतन अग्नि को। वह कौन—सी चेतन अग्नि है?— आत्मा, जो बुद्धि से सम्बन्धित है, ज्ञान से सम्बन्धित है। क्यों जगाओ?— बस, अपने उद्देश्य के लिए। वह उद्देश्य कौन—सा है?— वह उद्देश्य जो मैंने प्रथम वर्णन किया कि अन्धकार का नाश करने के लिए यज्ञ किया जाता है। वह अन्धकार कैसे दूर होगा? कैसे उसका नाश होगा?— जैसे अग्नि ही आत्मा के चेतन हो जाने पर पापरूपी कृष्णधूम बाहर

जिसे अपनी मातृभूमि से प्रेम नहीं है, क्या वह इस मातृभूमि पर जन्म देने वाले परमात्मा से सच्चा प्रेम कर सकेगा? उत्तर स्पष्ट है— नहीं।

भागता दृष्टिगोचर होता है। पुरोहित को सूर्यसमान सामने अपनी पूर्व दिशा में समझना चाहिए और पुरोहित की आज्ञानुसार करना और चलना चाहिए। परन्तु नित्यकर्म में कोई पुरोहित नहीं होता, इसलिए यजमान अपनी आत्मा को, जो इन्द्र है, पुरोहित का रूप बना लेवे, क्योंकि नित्यकर्म में नित्य रहनेवाली उसकी आत्मा ही है। जैसे यजमान को पुरोहित का अनुयायी बनकर, उसके वश में होकर, उसके पीछे चलने की आज्ञा है, तभी यज्ञ सफल होता है, ऐसे ही यजमान को अपनी इन्द्रियों को आत्मा का अनुयायी बनाकर आत्मा के वश में रखकर उसके पीछे चलाना चाहिए, जिससे फिर कभी पाप सामने आ ही न सके, समूल नाश हो जाए। आशा है कि अब आप लोग समझ गए होंगे कि पुरोहित की स्थापना क्यों पूर्व में की जाती है। यदि किसी को और कोई शंका हो, तो पूछ लेवे, यथा–सामर्थ्य उत्तर देने का प्रयत्न करूँगा।

इष्टापूर्त्त

श्रद्धाप्रकाश–इस मन्त्र (उद्बुद्धयस्व) में इष्टापूर्त्त से क्या अभिप्रेत है? क्या यही कि सम्पूर्ण इष्ट अर्थात् इच्छाओं की पूर्ति हो जाती है?

महात्मा–आध्यात्मिक अवस्था में जब मनुष्य की आत्मा जग जाए तो फिर कौन–सी इच्छा या इष्ट है जो इसका शेष रह सकता है? उच्च कोटि का तो अर्थ यही है। मध्यम कोटि का अर्थ– यज्ञ का नाम इष्टकामधुक् है, अतः यज्ञों से यथाविधि सम्पूर्ण कामनाएँ पूरी हो जाती हैं। भौतिक रूप में, निकृष्ट रूप में इष्ट+पूर्त्त दो वस्तुएँ हैं। इष्ट भी छः हैं और पूर्त्त भी कई हैं– (1) अग्निहोत्र, (2) तप, (3) सत्य, (4) वेदों की रक्षा, (5) अतिथि–सत्कार, (6) प्राणियों का पालन करना, ये सब इष्ट कहलाते हैं और (1) बावली, कूप, तालाब (जलस्थान) बनवाना, (2) मन्दिर, यज्ञशाला, गुरुकुल (पूजास्थान) बनवाना, (3) गोशाला, अनाथालय, धर्मशाला बनवाना, (4) अन्नदान देना, (5) वाटिका लगाना, इत्यादि ये सब पूर्त्त कहलाते हैं।

अग्निहोत्रं तपः सत्यं वेदानां चानुपालनम्।
आतिथ्यं वैश्वदेवश्च इष्टमित्यभिधीयते।।
वापी–कूप–तडागादि देवतायतनानि च।
अन्नप्रदानमारामः पूर्त्तमित्यभिधीयते।।

इनका अभिप्राय यह है कि यज्ञ–कर्म के दो भाग हैं। इष्ट का सम्बन्ध नित्य से और अनित्य से भी है, और पूर्त्त का नित्य से है। भावना के अनुकूल ही फल होता है।

ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म् ओ३म्

ग्रीष्मोत्सव के अवसर पर दिनांक 6 मई 2015 को ओ3म् ध्वज फहराने के अवसर पर मंच पर विद्यमान तपोवन आश्रम के पदाधिकारीगण तथा स्वामी दिव्यानन्द जी महाराज, श्री उत्तम मुनि जी, श्री आशीष जी दर्शनाचार्य, डॉ० वेदप्रकाश आर्य, श्री चमनलाल रामपाल, पंडित उमेश चन्द कुलश्रेष्ठ एवं श्री रुवेल सिंह, भजनोपदेशक आदि

स्वर्ग खाली पड़ा है

(एक रोचक कथा)

नारद एक सैलानी (घुमक्कड़) थे। वे भ्रमण करते हुए स्वर्ग में जा निकले। देखा आनन्द मूर्तरूप में वहाँ विद्यमान है। प्रसन्नता की लहरें मनमोहक रूप से चल रही हैं। प्रत्येक दिशा में प्रसन्नता है। दुःख–दर्द का कहीं नाम व चिह्न भी नहीं है, परन्तु आश्चर्य है और बड़ा भारी आश्चर्य है कि स्वर्ग खाली पड़ा है। कोई भी मनुष्य दिखाई नहीं देता। स्वर्ग–भूमि में भ्रमण करते हुए नारदजी एक सुन्दर उद्यान में पहुँच गये। प्रसन्नता की तरंगों ने, मधुर ध्वनिवाले बाजों ने और मनमोहनी सुगन्ध की लपटों ने नारदजी को मस्त कर दिया। देखा सामने भगवान् बैठे हैं। छूटते ही पूछा– ''क्यों भगवन्! यह आपका स्वर्ग खाली क्यों पड़ा है? असीम प्रसन्नताओं और आनन्दों को कौन भोगना नहीं चाहता।

भगवान्– बात सत्य है, परन्तु हवा ही पलट गई है। अब कोई भी स्वर्गभूमि में आना नहीं चाहता।

नारद– वाह! यह कैसे सम्भव हो सकता है। स्वर्ग का नाम लेते ही सहस्त्रों लोग इधर दौड़ पड़ेंगे।

भगवान्– बहुत अच्छा है। तनिक संसार से किसी को यहाँ ले तो आओ।

नारद शनैः–शनैः चलते हुए स्वर्ग से बाहर आये। शहर की ओर पग बढ़ाया। उनके हृदय में आशा की किरण थी, उल्लास था और जोश था– 'अभी किसी व्यक्ति को स्वर्ग में प्रविष्ट कराता हूँ' यही सोचते हुए नारदजी शहर में पहुँच गये। नगर में प्रवष्टि होते ही एक बूढ़ा, जिसके न मुँह में दाँत और न पेट में आँत, मिला। नारदजी उससे कहने लगे– ''कहो वृद्धबन्धु! स्वर्ग में चलोगे?'' यह वाक्य सुनकर बूढ़ा बिगड़ा और कहने लगा– ''भाग्यहीन! तू ही स्वर्ग में जा, जिसका न कोई आगा है न कोई पीछा, मैं क्यों जाऊँ। मेरे पुत्र और पौत्र हैं, स्त्री है, धन है। जो भाग्यहीन और निर्धन हो, वह बैकुण्ठ में जाए।''

नारदजी झिड़की सुनकर चुपचाप आगे चल दिये। इस बार एक युवक दिखाई दिया। नारदजी ने धीरे से उसके कान में कहा– ''क्या स्वर्ग में चलेगा?''

उसने सुनते ही कहा– ''क्या बुद्धि मारी गई है? स्वर्ग तो बूढ़ों के लिए बना है, जो किसी काम के योग्य नहीं रहते। हम तो सब काम कर सकते हैं।''

नारदजी अब और आगे बढ़े और एक व्यक्ति पर यही प्रश्न किया। नारदजी को उत्तर मिला– ''किसी अपंग, लूले–लंगड़े को खोजिए। यहाँ तुम्हारी दाल नहीं गल सकती।'' इसी प्रकार नारदजी नगर के एक सिरे से दूसरे सिरे तक चक्कर लगा गये, परन्तु किसी ने भी बैकुण्ठ या स्वर्ग में जाना स्वीकार नहीं किया।

अब नारदजी के मुखमण्डल पर निराशा की झलक दिखने लगी। वे एक कोने में शान्त होकर बैठ गये। वे संसार के विभिन्न दृश्यों पर

शत्रु की अपेक्षा मित्र को माफ कर देने का काम अधिक कठिन है। मन की शांति प्राप्त करने के लिए माफ करने का अभ्यास बनाएं।

दृष्टि दौड़ाने लगे। इतने में एक अमीर साहूकार माथे पर तिलक लगाये उधर से निकला। नारदजी ने उसे अपने मतलब का समझकर बुलाया और पास बिठाकर कहा– सेठजी! संसार के सुख बहुत देख लिये। अब चलिए, तनिक बैकुण्ठ के सुख भी देखिए।

सेठ–''हाँ, मैं भी यही चाहता हूँ, परन्तु अभी पुत्र योग्य नहीं हुआ। यह तनिक बड़ा हो ले और कामकाज सँभाल ले, तो फिर चलूँगा। आप कुछ दिन के पश्चात् फिर आना।''

नारदजी इस आश्वासन पर चले गये और कुछ समय के पश्चात् पुनः सेठजी के पास आये। देखा कि सेठजी का लड़का सारे व्यापार में निपुण हो गया है। नारदजी ने सेठजी से कहा– ''कहिए, अब तो आप चलेंगे?''

सेठ– ''हाँ, बात तो ठीक है, परन्तु मैं चाहता हूँ मेरे पुत्र के घर सन्तान हो ले, फिर चलूँगा।''

इसप्रकार कुछ समय और व्यतीत हो गया। नारदजी पुनः सेठ के पास पहुँचे। देखा, अब उनकी गोद में पोता खेल रहा है। ''कहो अब चलोगे?'' नारद ने पूछा, परन्तु उत्तर हँसते हुए यह मिला कि पोते का विवाह करके अवश्य चलूँगा।

समय व्यतीत होते देर नहीं लगती। इसी प्रकार कुछ समय व्यतीत हो गया। नारदजी इस बार सेठ के पास आये तो ज्ञात हुआ कि अपने ही धन पर साँप बना बैठा है। समाधि अवस्था में ही पूछा– ''क्यों? अब भी चलना है, या नहीं।'' उत्तर मिलता– ''पुत्र धन की अच्छी प्रकार सुरक्षा करने के योग्य हो ले, तो चलूँगा।''

कुछ समय व्यतीत होने पर नारदजी एक बार पुनः आये तो साँप भी मर चुका था। इस बार नारद को ज्ञात हुआ कि द्वार पर जो कुत्ता बैठा है, यह वही सेठ है। नारदजी ने पूछा– ''बैकुण्ठ चलोगे।'' उत्तर मिला– ''पौत्र अयोग्य है। मैं द्वार पर बैठकर चारों ओर देखता हूँ, जिससे कोई धन को उठाकर न ले जाए। कुछ और समय तक प्रतीक्षा कीजिए।

नारदजी कुछ मास के पश्चात् पुनः आये। इस बाद पुनः वही प्रश्न किया, परन्तु उत्तर क्या मिला– ''नारदजी महाराज! सच्ची बात तो यह है कि हम अभी इसी स्थान पर आनन्द में हैं। कुछ समय और यहीं रहने दीजिए।''

नारदजी को इस बार बहुत दुःख हुआ। निराश और हताश होकर स्वर्ग की ओर चल दिये। जब स्वर्ग में पहुँचे तो भगवान् ने पूछा– ''कहो! कितने व्यक्ति स्वर्ग में आये हैं?''

नारदजी सिर नीचा किये हुए कहने लगे– ''भगवन्! आप तो सत्य ही कहते थे। संसारवाले अपने धन्धों और व्यापार आदि में इसप्रकार फँसे हुए हैं कि वे स्वर्ग में आना नहीं चाहते।''

यह एक काल्पनिक कथा है, जिसमें सांसारिक जनों की अवस्था का मनोहर और हूबहु चित्र खेंचा गया है। प्रश्न यह है कि क्या स्वर्ग खाली ही पड़ा रहेगा? क्या कोई भी स्वर्ग में जाना नहीं चाहता? इसका उत्तर संसारवालों को देना चाहिए और जो लोग बैकुण्ठ में जाना चाहें, वे अपने प्रार्थना–पत्र बहुत शीघ्र हमारे पास भेज दें।

बदला लेकर आप कुछ समय तक अस्थाई रूप से संतुष्ट हो सकते हैं। लेकिन माफ करके आप लंबे समय तक सुखी व संतुष्ट रह सकते हैं।

सोयाबीन के उपयोग

सोयाबीन एक ऐसा पुष्टिकारक अन्न है, जिसमें प्रोटीन, वसा, श्वेतसार, खनिज, लवण, लौह, विटामिन 'बी' आदि पोषक तत्त्व प्रचुर मात्रामें विद्यमान होते हैं। इसमें मिलने वाला प्रोटीन किसी भी आमिष–निरामिष पदार्थों में पाये जाने वाले प्रोटीन से उन्नत किस्म का होता है। यह प्रोटीन उच्च कोटि का होने के साथ ही 35–40% तक पाया जाता है। यह बालक, वृद्ध तथा रोगी सभी के लिये हितकर है। इससे कब्ज़ और गैस के रोग नहीं होते तथा बालकों का शारीरिक विकास होता है। इसमें कोलेस्ट्रॉल की मात्रा भी कम होती है। इसके नियमित प्रयोग से बल–वीर्य की वृद्धि होती है। शाकाहारियों को तो प्रकृति के इस अनमोल भेंट का अवश्य प्रयोग करना ही चाहिये। इसमें अति गुणकारी तत्त्वों की अपेक्षा इसका मूल्य भी काफी सस्ता है। इसके दैनिक उपयोग की निम्नलिखित विधियाँ हैं–

(1) **सोयाबीन का आटा**– पानी में लगभग 10 घंटे भिगो दे। फिर सुखाकर चक्की में इसका आटा पिसवा ले। इसकी अत्यन्त स्वादिष्ट रोटी बनती है। स्वाद में गेहूँ के आटे से कुछ अलग होती है। इसके आटे से अनेक व्यंजन तैयार होते हैं। गेहूँ के आटे में मिलाकर इससे रोटी, परांठा, हलवा आदि बनाते हैं। इसके आटे को अधिक दिन तक नहीं रखा जा सकता।

(2) **सोयाबीन का दूध–दही**– सोयाबीन को लगभग दस घंटे पानी में भिगो दे। फिर इसे बारीक पीसकर समुचित मात्रा में पानी मिलाये ताकि यह दूध जैसा हो जाय। इसका स्वाद ठीक करने के लिये पीसते समय इसमें दो–तीन छोटी इलायची मिला दे तथा दूध को आधे घंटे तक उबाले। गुणकारी और पौष्टिक दूध तैयार हो गया। इस दूध में जामन डालकर दही भी जमाया जा सकता है।

(3) **सोयाबीन का तेल**– सरसों तथा मूँगफली की तरह सोयाबीन का भी तेल निकाला जाता है। पौष्टिक होने के साथ ही अन्य खाद्य तेलों से अधिक सस्ता होता है। वनस्पति या सरसों के तेल के स्थान पर इसका प्रयोग कर सकते हैं। इसका तेल सिर में लगाने से बाल काले होते हैं। सोयाबीन के तेल में कुछ बूँद नींबू का रस मिलाकर लगाने से मुँहासे ठीक हो जाते हैं।

(4) **सोयाबीन की बड़ी**– सोयाबीन का तेल निकालने के बाद इसका जो छिलका बचता है, उससे निर्मित बड़ी पौष्टिक होती है। सब्जी, दाल आदि में डालकर इसको उपयोग में लाते हैं।

(5) **सोयाबीन की चटनी**– भिगोये हुए सोयाबीन में अनुपात से नमक–मिर्च इत्यादि डालकर पीस ले। स्वादिष्ट चटनी के रूप में इसका प्रयोग कर सकते हैं।

(6) **सोयाबीन की खली**– पशुओं को इसकी खली खिलाने से दूध की मात्रा बढ़ जाती है। बच्चों के लिये यह दूध बहुत गुणकारी होता है।

दया लेती कुछ नहीं, पर देती बहुत कुछ है। ये उन दरवाजों को खोल देती है, जो और प्रकार से नहीं खुलते। कृपया दयालु बनें।

सोयाबीन–सम्पूर्ण संतुलित भोजन

सुश्री पूर्णिमा शर्मा

सोयाबीन बच्चों के लिये विशेष उपयोगी है। बढ़ती हुई अवस्था में संतुलित भोजन का विशेष महत्व है, जिसमें विभिन्न फलों, सब्जियों आदि से प्रोटीन तथा विटामिन की प्राप्ति होती है। इसका अर्थ हुआ हमें संतुलित भोजन प्राप्त करने के लिये गुणों के अनुसार अलग–अलग फल तथा सब्जियाँ लेनी होंगी, परन्तु सोयाबीन में ये सभी गुण मौजूद हैं। बच्चों के लिये यह दूध का विकल्प भी है।

एक महत्वपूर्ण जानकारी के मुतातिक यदि किसी बच्चे को गाय के दूध की बजाय सोया–दूध पिलाया जाय तो एक सप्ताह के भीतर कोलेस्ट्राल घटने का परिणाम स्पष्ट सामने आता है। सोया में 32 प्रतिशत तक कोलेस्ट्राल घटाने की क्षमता है। यह एक पोषक भोजन है। इसमें भरपूर विटामिन तथा प्रोटीन मौजूद हैं। साथ ही यह वसारहित भोजन है। कुपोषित भोजन के कारण ही 90 प्रतिशत रोगी गैस, अपच, तनाव, थुलथुलेपन तथा एनीमिया के शिकार देखे जाते हैं। काबोहाइड्रेट की अधिकता चर्बी बढ़ाती है तथा विभिन्न तन्तुओं को नष्ट करती है। जबकि सोया में कार्बोहाइड्रेट की अधिकता नहीं होती। इसके विपरीत इसका प्रयोग रक्ताल्पता को दूर खता है।

आजकल सोयाबीन का प्रयोग बढ़ रहा है। इसका प्रयोग सोयाबीन–तेल, सोया–चटनी, सोया–प्रोटीन आदि के रूप में किया जा रहा है। इस भोजन को वसारहित भोजन कह सकते हैं।

सोसाबीन रक्तसंचार को संयत रखता है। यह रेशेदार भोजन है, जो पाचन के लिये सर्वोत्तम है। यह वजन को घटाकर शरीर को स्फूर्ति देता है। उच्च रक्तचाप वाले रोगी के लिये यह उत्तम भोजन है।

सामान्य रूप से सोयाबीन के निम्नलिखित लाभ दिखते हैं–

1. यह रक्ताल्पता दूर करता है।
2. पाचनशक्ति बढ़ाता है।
3. क़ब्ज़ दूर करता है।
4. कोलेस्ट्राल की मात्रा घटाकर हृदय रोगों को दूर रखता है।
5. वजन घटाकर शरीर को स्फूर्तिदायक बनाता है।
6. शरीर के विभिन्न तन्तुओं के लिये पोषक है।
7. वसारहित होने के कारण उच्च रक्तचाप के रोगियों के लिये उत्तम है।
8. बच्चों के दूध का विकल्प है।

बायें से दायें– स्वामी कमलानन्द जी, डॉ० स्वामी दिव्यानन्द जी, श्री दर्शन कुमार अग्निहोत्री जी, डॉ० वेदप्रकाश आर्य जी, श्री चमनलाल रामपाल जी

छात्रवृत्ति का आप कैसे इस्तेमाल करते हैं

संजीव कुमार

तपोवन विद्या निकेतन के छात्र–छात्राओं को विद्याध्ययन में प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से विद्यालय के चेयरमैन श्री गोपाल कृष्ण हाण्डा तथा आश्रम के अध्यक्ष श्री दर्शन कुमार अग्निहोत्री जी द्वारा 2 वर्ष पूर्व नर्सरी से कक्षा–8 तक परीक्षा में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान पाने वाले विद्यार्थियों को क्रमशः 150 रुपया, 125 रुपया एवं 100 रुपया प्रतिमाह की छात्रवृत्ति पूरे वर्ष तक देने का निश्चय किया गया। छात्रवृत्ति प्राप्त करने के परिणामस्वरूप विद्यार्थियों ने उस छात्रवृत्ति का कैसे उपयोग किया और उनका कितना उत्साहवर्धन हुआ इस पर अपने विचार व्यक्त करने के लिए इन छात्र–छात्राओं को विद्यालय परिसर में बैठाकर लेख लिखने के लिए कहा गया। बच्चों ने अपने विवेक से हृदय की गहराईयों से बहुत ही मार्मिक शब्दों में अपनी भावनाओं को व्यक्त किया है। इन्हीं बच्चों में से एक प्रिय संजीव कुमार, कक्षा–8 के विद्यार्थी का लेख आपके अवलोकनार्थ प्रस्तुत है–

नमस्कार

मेरा नाम संजीव कुमार है, मैं कक्षा आठ में पढ़ता हूँ। मैं इस विद्यालय में छठी कक्षा में आया। किसी नई जगह में घुलने–मिलने में हर किसी को थोड़ा समय लगता है। मुझे भी इस विद्यालय के माहौल में यहाँ के और विद्यार्थियों के साथ घुलने–मिलने में थोड़ा समय लगा लेकिन तब मुझे पता चला कि यह विद्यालय कितना अच्छा है। यहाँ की अध्यापिकाएँ कितनी अच्छी हैं। वह हर शब्द का हिन्दी अनुवाद कर सभी छात्रों को बताती है। मुझे यह तो पता था कि कक्षा में प्रथम, द्वितीय और तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति मिलती है। छात्रवृत्ति से एक आम विद्यार्थी को काफी मदद मिलती है। वह उससे अपनी पुस्तकें कापियाँ आदि खरीद सकता है। मैंने भी कक्षा में तृतीय स्थान प्राप्त किया और मुझे जो छात्रवृत्ति मिली उससे मैंने अपनी पुस्तकें खरीदी। कक्षा छः में तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले विद्यार्थी को भला कितनी छात्रवृत्ति मिलती होगी लेकिन फिर भी मुझे जितनी भी छात्रवृत्ति मिली मैं उससे सिर्फ अपनी पुस्तकें ही ले पाया। लेकिन मैं और मेहनत करूँगा और अपनी कक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त करूँगा क्योंकि हमारी अध्यापिकाएँ कहती हैं कि जरूरी नहीं कि जो इस बार कक्षा में प्रथम आया है वही अगली बार भी कक्षा में प्रथम आएगा। अगर तुम भी मेहनत करोगे और पढ़ाई में ज्यादा ध्यान दोगे तो तुम भी कक्षा में प्रथम आ सकते हो। हम दो भाई हैं। मेरा बड़ा भाई दसवीं कक्षा में पढ़ता है और मैं आठवीं कक्षा में पढ़ता हूँ। हम दोनों को पढ़ाने के लिए मेरे पिता जी बारह घंटों से भी ज्यादा काम करते हैं। वे हमेशा कहते हैं कि मैं तुम्हारे लिए किसी भी चीज की कोई भी कमी नहीं करूँगा। तुम बस पढ़ो क्योंकि में चाहता हूँ कि तुम मेरी तरह दिन–रात इधर–उधर न भागो। मैंने तो पढ़ाई नहीं कि तब मुझे यह नतीजा भुगतना पढ़ रहा है। मेरे पिता जी कहते हैं कि तुम पढ़–लिखकर किसी अच्छे क्षेत्र में नौकरी करो और एक अच्छे ईमानदार इंसान बनो। तुम जिस क्षेत्र में भी नौकरी करो वहाँ तुम्हें असफलता का मुँह न देखना पड़े। तुम्हें उन्नति ही उन्नति प्राप्त हो और कुछ समाज सेवा भी कर सको। इसीलिए मैं अच्छे विद्यार्थियों की संगत में रहता हूँ व कक्षा में ध्यान देता हूँ ताकि मैं पढ़–लिखकर अपने पिताजी की इच्छा पूरी कर सकूँ। हमारे विद्यालय के सामने एक वैदिक साधन आश्रम है वहीं से हमें छात्रवृत्ति प्राप्त होती है। मैं उनका और अपनी अध्यापिकाओं का आभारी हूँ कि उन्होंने मुझे छात्रवृत्ति प्रदान की। वहाँ बहुत ही पढ़े–लिखे स्वामी जी आते रहते हैं वह हमें बहुत अच्छी–अच्छी बातें सिखाते हैं। मैं भी उन्हीं की तरह पढ़–लिखकर एक बड़ा आदमी बनना चाहता हूँ ताकि मैं भी किसी विद्यालय के उत्तम छात्रों को छात्रवृत्ति दे सकूं व समाज सेवा कर सकूं छात्रवृत्ति को प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों का हौंसला बढ़ता है और वह और ज्यादा मेहनत कर अच्छे नम्बरों से पास होते हैं। मैं उन विद्यार्थियों को यही कहना चाहता हूँ कि हमने छात्रवृत्ति प्राप्त की और मेरी यही इच्छा है कि जिन्हें छात्रवृत्ति नहीं मिली वे भी छात्रवृत्ति प्राप्त करें और अपनी शिक्षा को आगे बड़ा सकें। मैं भी और मेहनत कर प्रथम आना चाहता हूँ क्योंकि मैं अपनी पढ़ाई का खर्च खुद उठाना चाहता हूँ क्योंकि मेरे पिताजी मुझे आगे पढ़ा पाएंगे या नहीं मैं नहीं जानता लेकिन मैं यह जरूर जानता हूँ कि अगर मैं हमेशा पढ़ाई में अच्छे अंकों से पास होता रहा तो मुझे छात्रवृत्ति मिलती रहेगी और में अपनी पढ़ाई आगे बढ़ा पाऊँगा।

संन्यास धर्म

अम्बाराम सिद्धान्त शास्त्री, हल्द्वानी

आज हम देखते हैं कि कोई भी व्यक्ति गेरुए वस्त्रों को धारण कर अपने को संन्यासी घोषित कर देता है। अब प्रश्न उठता है कि क्या संन्यासियों के लिए एक आचार संहिता बनाई जानी चाहिए? संन्यास लेते समय ही संन्यासी के लिए क्या–क्या कर्त्तव्य हैं वेद शास्त्रों में इसका विधि विधान दिया गया है। अतः संन्यास लेते समय उनका पालन करना संन्यासी का परमकर्त्तव्य होता है। यदि संन्यासी के कर्त्तव्य क्या हैं, वे यह नहीं जानते हैं तो उन्होंने संन्यास ग्रहण किस आधार पर किया। मुझे विश्वास है कि वे इस कर्त्तव्य के बारे में अच्छी तरह जानकारी भी रखते होंगे। परन्तु आचरण में लाना नहीं चाहते। महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने संस्कारविधि के संन्यास संस्कार विधि प्रकरण में लिखा हैः–

संन्यास–संस्कार उसको कहते हैं कि जो मोहादि आवरण, पक्षपात छोड़ के विरक्त होकर सब पृथिवी में परोपकारार्थ विचरे। आगे फिर बताया–

प्रथम जो.............कि ब्रह्मचर्य पूरा करके गृहस्थ और गृहस्थ होके वनस्थ होके संन्यासी होवे। यह क्रम संन्यास अर्थात् अनुक्रम से आश्रमों का अनुष्ठान करता–करता वृद्धावस्था में जो संन्यास लेना हैं, उसी को क्रमसंन्यास कहते हैं।

द्वितीय प्रकार– यह ब्राह्मणग्रन्थ का वाक्य है– जिस दिन दृढ वैराग्य प्राप्त होवे उसी दिन चाहे वानप्रस्थ का समय पूरा भी न हुआ हो अथवा वानप्रस्थ आश्रम का अनुष्ठान न करके गृहाश्रम से ही संन्यासाश्रम ग्रहण करे। क्योंकि संन्यास में दृढ वैराग्य और यथार्थ ज्ञान का होना ही मुख्य कारण है।

तृतीय प्रकार– यह भी ब्राह्मण ग्रन्थ का वचन है। यदि पूर्ण अखण्डित ब्रह्मचर्य, सच्चा वैराग्य और पूर्ण ज्ञान विज्ञान के प्राप्त होकर विषयाशक्ति की इच्छा आत्मा से यथावत् उठ जावे, पक्षपातरहित होकर सबके उपकार करने की इच्छा होवे और जिसको दृढ निश्चय हो जावे कि मै मरणपर्यन्त यथावत् संन्यास धर्म का निर्वाह कर सकूँगा, तो वह न गृहाश्रम करे न वानप्रस्थाश्रम, किन्तु ब्रह्मचर्याश्रम को पूर्ण कर ही के संन्यासाश्रम को ग्रहण कर लेवे। (महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज ने स्वयं ब्रह्मचर्याश्रम से संन्यासाश्रम ग्रहण किया था ताकि स्वयं भोजन बनाने आदि के बखेड़े से मुक्ति मिल जावे जिससे परोपकार के कार्य करने में पूरा समय मिल जावे)

उक्त प्रवचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि संन्यासी मोहादि आवरण, पक्षपात छोडके विरक्त होकर संसार में विचरे, दृढ वैराग्य और यथार्थ ज्ञान का होना ही मुख्य कारण है। विषयाशक्ति की इच्छा मन से जब उठ जावे तब संन्यास लेना चाहिए। पक्षपातरहित होकर सबके उपकार करने की इच्छा मरण पर्यन्त यथावत् संन्यास–धर्म का निर्वाह कर सकूँगा ऐसा दृढ़ जानकर ही संन्यास ग्रहण करना चाहिए।

संसार में दो प्रकार के व्यक्ति हैं, लेने वाले और देने वाले।
हो सकता है, लेने वाले खाते अच्छा हों, पर देने वाले सोते अच्छा हैं। अच्छा सोएं।

गीता में भी कहा है– अद्वेश्य सर्वभूतानां मैत्रः करूण एव च। निर्ममो निरहंकारः सम दुःख सुख क्षमी।। गीता 12/137 अर्थात् प्राणिमात्र से द्वेश रहित होकर सबको मित्र समान मानते हुए सब पर करूणा करे और किसी व्यक्ति से अथवा किसी वस्तु से मोह न रखे, अहंकार रहित होकर सुख दुःख में समान भाव बनाये रखे और किसी से कितना भी बडा अपराध हो जाये उस पर क्रोध न करके क्षमा दान करता हुआ सर्वत्र सत्य का उपदेश करता हुआ सब जगह घूमता रहे। वही उत्तम कोटि का संन्यासी है।

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज ने संस्कारविधि में संन्याससंस्कार के अन्तर्गत ऋग्वेद मण्डल 9 सू0 113 मंत्र 1,2,4,6 से लेकर 11 तथा मनुस्मृति के 23 श्लोक देकर संन्यासाश्रम के कर्त्तव्य कर्म के बारे में विस्तृत रूप से लिखा है। इन मंत्रों में कहा गया है जैसे सूर्य हिंसनीय पदार्थों से युक्त भूमितल में स्थित रस को पीता है वैसे संन्यास लेने वाला पुरूष उत्तम मूल रसों को पीवे। जैसे चन्द्रमा सबको आनन्द देता है उसी प्रकार संन्यासी सत्योपदेश देकर सबको सुख देवे, संन्यासी ज्ञान विज्ञान का उपदेष्टा हो, निर्वैरता, सत्यभाषण यथार्थ बोले, प्राणायाम योगाभ्यास से निश्पक्ष होकर शरीर, इन्द्रिय, मन, बुद्धि को पवित्र करे, परमेश्वर में युक्त रहे। मोक्षप्राप्ति के लिए निरन्तर प्रयत्न करता रहे। आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक दुःखों से रहित और कामनारहित होवे इत्यादि।

संन्यासी का परम कर्त्तव्य है कि उक्त बातों को अंगीकार करते हुये संन्यासाश्रम का पालन करे। यदि संन्यासी ही समाज में विकृति फैलाने वाले कर्म करे तो इससे अधिक पाप और क्या हो सकता है। जो संन्यासी धर्म का पालन नहीं कर सकता उसे संन्यास नहीं लेना ही हितकर होगा। केवल वस्त्र रंग देना मात्र संन्यासी नहीं माना जा सकता अपितु उसे अपनी आत्मा में संन्यास धारण करना चाहिए। जब आम आदमी की भॉति या उससे भी गिरकर जीना है तो क्यों संन्यासाश्रम का माखौल उडाया जा रहा है। संन्यासी को वित्तैषणा, पुत्रैषणा, लोकैषणा से सदा दूर रहना चाहिए यही शास्त्र बचन भी है।

वर्तमान् में जो अपने आपको संन्यासी कहते हैं क्या वे यह कहने का साहस कर सकते हैं कि वे उक्त दिये गये शास्त्र वचनों का यथावत पालन करते हैं? यदि नही ंतो उन्हें जनता को धोखा देने की हिम्मत नहीं करनी चाहिए। क्या वे वित्तैषणा, पुत्रैषणा, लोकैषणा में नहीं फँसे हैं?

संन्यासी अपने मन में निश्चित जाने कि दण्ड, कमण्डल और काशायवस्त्र आदि चिह्न धारण धर्म का कारण नहीं हैं, सब मनुष्यादि– प्राणियों के सत्योपदेश और विद्यादान से उन्नति करना संन्यासी का मुख्य कर्म है।

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज कहते हैं संन्यास लेना ब्राह्मण का ही धर्म है क्योंकि जो सब वर्णों में पूर्ण विद्वान्, धार्मिक, परोपकारप्रिय मनुष्य है उसी का ब्राह्मण नाम है।

इस प्रकार हमारा निवेदन है संन्यास ग्रहण करने वाले मनुष्यों को जान लेना चाहिए कि उक्त वेद शास्त्रों द्वारा निर्धारित संन्यासी के कर्त्तव्य कर्म तथा मर्यादाएं ही संन्यासी के लिए आचार संहिता है। वेद शास्त्रों से प्रथक् अपने इच्छानुकूल मनमाने ढंग से आचार संहिता बनाना वेदादिशास्त्रों के विपरीत है।

किसी और ने हमारे लिए पेड़ लगाए थे, जिनकी छाया में हमने सुख लिया।
अब हम भी दूसरों के लिए पेड़ लगाएं, जो उनकी छाया में सुख लेंगे।

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका शिविर

(4 जुलाई सायं से 12 जुलाई 2015 प्रातः तक)

ईश्वरीय वाणी वेद का अध्ययन करने में अभिरुचि रखने वाले महानुभावों के लिये आवश्यक है कि वे प्रथम महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' पुस्तक का विधिवत् अध्ययन करें। जिससे वे वेदोक्त उपासना रीति व वेदविषयक मूलभूत सिद्धान्तों को तर्क पूर्ण रीति से समझते हुए महर्षि के वेद भाष्यों को भी समझने का सामर्थ्य धीरे-धीरे विकसित कर सकें। इस शिविर में 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' अन्तर्गत 'उपासना विषय' तथा 'वेदोत्पत्ति विषय' महर्षि के संस्कृत भाष्य सहित अध्ययन-अध्यापन रीति से आत्मसात् कराये जायेंगे। यह शिविर आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य के मार्गदर्शन में होगा। शिविर विषयक अन्य विवरण निम्नलिखित हैं-

1. **पहुंचने का समय :** 4 जुलाई सायं 5 बजे तक अवश्य पहुंच जायें। शिविर की प्रथम कक्षा 4 जुलाई रात्रि 8 बजे प्रारम्भ होगी।
2. **साथ लाने योग्य वस्तुएं :** (क) ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका (अनिवार्य) (ख) कापी, पेन (ग) टार्च (घ) वर्षा से रक्षा हेतु छाता आदि।
3. **शिविर शुल्क :** इस ईश्वरीय कार्य में भोजन, निवासादि की व्यवस्था के लिये सभी प्रतिभागियों द्वारा 'शिविर हेतु' भावनापूर्ण स्वैच्छिक सहयोग यथासामर्थ्य देना अनिवार्य है।
4. **पंजीकरण :** शिविर में स्थान सीमित हैं। अतः निम्नलिखित महानुभावों से सम्पर्क कर अपना स्थान शीघ्र सुरक्षित करा लें-

(क) श्री नन्दकिशोर जी अरोड़ा, दिल्ली, मो॰ 09310444170
(समय : प्रातः 10.00 से सायं 4.00 बजे, रात्रि 8.00 से 10.00 बजे तक)

(ख) श्री सत्यपाल जी आर्य, दिल्ली, मो॰ 09810047341
(समय : प्रातः 10.00 से सायं 5.00 बजे, रात्रि 8.00 से 9.00 बजे तक)

5. स्थानीय महानुभाव भी यथानुकूलता कक्षाओं में भाग ले सकते हैं :

प्रथम कक्षा : प्रातः 10.15 से 12.15 तक - द्वितीय कक्षा : 2.45 से सायं 4.30 तक

प्रातः सायं उपासना व्यक्तिगत

निवेदक

दर्शन कुमार अग्निहोत्री
अध्यक्ष
मो. 9810033799

ई॰ प्रेम प्रकाश शर्मा
सचिव
मो. 9412051586

जीवन यज्ञ : सभी कामनाओं की पूर्ति के लिए जरूरी

अखिलेश आर्येन्दु

वेद में कहा गया है—यज्ञौ वै श्रेष्ठमं कर्म यानी यज्ञ सबसे श्रेष्ठ कर्म है। फिर वेद में प्रश्न किश गया है कि कौन—सा श्रेष्ठ श्रेष्ठ कर्म ही यज्ञ हैं? वेद में ही उत्तर दिया गया है—सभी श्रेष्ठ कर्म यज्ञ हैं। इस तरह कहा जा सकता है कि जितने भी श्रेष्ठ कर्म हैं उन्हें सम्पन्न करने वाले श्रेष्ठी हैं। कहने का भाव यह है कि जो श्रेष्ठ कर्म करने वाले होते हैं वहीं संसार में पूज्य हो सकते हैं। यहां वेद सावधान करता है। किस बात पर सावधान करता है? इसका जवाब है— इंद्रिय से गलत कार्य न हो जाएं इस बात पर सावधान करता है। यजुर्वेद के अध्याय 18 में वेद भगवान बहुत बढ़िया बात कहते हैं। कौन—सी बढ़िया बात कही गई है। वेद का मंत्र कहता है—लम्बी उम्र के लिए यज्ञ करो, आखों से हमेशा बेहतर चीजें ही देखना चाहिए। वाणी से, मन से, इंद्रियों से यानी मन, वाणी और कर्म तीनों से बेहतर कर्म करने की प्रेरणा दी गई है। जो तीनों तरह से बेहतर यज्ञ करता है वह कभी जीवन में संकटग्रस्त नहीं होता है। हमेशा बेहतर कर्म करने वाले बनें, यही जीवन—यज्ञ है। इस जीवन—यज्ञ को समझने वाले बहुत कम लोग हैं। यजुर्वेद के एक मंत्र में मन, वाक्, चक्षु, कर्ण, हस्त, पैर, व आत्मा से श्रेष्ठ कर्म करने की प्रेरणा दी गई है। इसी प्रकार अथर्ववेद के एक मंत्र में सौ साल तक सुनने, सौ साल देखने, सौ साल तक स्वतंत्र रहने और सौ और इससे भी अधिक सालों तक स्वस्थ्य जीवन बिताते हुये शुभ कर्म करने की प्रेरणा दी गई है।

मानव का जीवन तभी यज्ञ बनता है जब वह कभी अशुभ, निरर्थक, दुखदायी, अपकारी, स्वार्थी, विश्वासघाती, देशद्रोही और समाजद्रोही कर्म नहीं करता है। महाभारत में भगवान वेद व्यास कहते हैं, यदि मनुष्य अपने परिवार और समाज की भलाई करते हुये देशरक्षा और धर्म रक्षा के लिए समर्पित रहकर कर्म करे तो वह स्वर्ग का अधिकारी बनता है। गीता में भगवान कृष्ण कहते हैं, तुम यज्ञमय जीवन बिताओ। यज्ञ से जैसे प्रकृति, समाज, परिवार और धर्म का कल्याण होता है, उसी प्रकार से व्यक्ति का जीवन जब यज्ञमय बनता है तो उससे भी धर्म, समाज, संस्कृति, परिवार, समाज और मानवता का भला होता है। अब सवाल यह उठता है कि यज्ञमय जीवन बनाये कैसे? आज समाज की जो स्थिति है क्या उसमें यज्ञमय कर्म करते हुये यज्ञमय जीवन बिताया जा सकता है?

महाभारत में एक बहुत सुंदर कथा आती है। महाराज युधिष्ठिर का यज्ञ कराने वाले ब्राह्मणों का महाराज ने खूब दक्षिणा देकर बिदा किया। ब्राह्मणों ने उन्हें यशस्वी और निष्कंटक सम्राट बने रहने का आशीर्वाद दिया। सब के बिदा हो जाने पर यज्ञकुंड के पास एक नेवला आया और यज्ञकुंड के पास यज्ञ की राख में लोटने लगा। यह देखकर वहां मौजूद रक्षकों ने नेवले को डंडे से भगाना चाहा, लेकिन नेवले का आधा शरीर सोने का और आधा सामान्य देखकर वहां मौजूद सभी लोगों को बहुत आश्चर्य हुआ। यह खबर महाराज युधिष्ठिर के पास पहुंची तो महाराज भी इस अद्भुत नेवले को देखने के लिए आए। युधिष्ठिर को देखकर नेवला बोला, महाराज! मैं आप के राजसूय यज्ञ की बहुत प्रशंसा सुनकर यहां इस आशा से आया था कि मेरा आधा शरीर भी सोने का हो जाएगा। इस आशा से मैं यज्ञ राख में लोटने लगा, लेकिन मुझे बडा आश्चर्य तब हुआ जब महायज्ञ की राख से मेरे शरीर पर कोई असर नहीं हुआ। इससे तो वे गृहस्थ तपस्वी ब्राह्मण परिवार ही अच्छा है जिनके कुल्ले के जल से मेरा आधा शरीर सोने का हो गया और आधा वैसे ही रह गया। फिर नेवले ने युधिष्ठिर के कहने पर सारी कथा कह सुनाई। कथा सुनकर महाराज को यह बात समझ में आ गई कि तप, सत्य और सुचिता से कमाए धन से जो सुख और शांति प्राप्त होती है वह अन्य द्वारा नहीं। असली यज्ञ तो दूसरों के लिए त्याग, तपस्या, सत्य का पालन और प्रकृति की रक्षा है।

जीवन—यज्ञ वह है जो तप, सत्य, सुचिता और सदाचार से कमाए धन के द्वारा किया जाता है। बड़े—बड़े यज्ञों का आयोजन होता है लेकिन उससे वह प्राप्ति नहीं हो पाती है जो सत्य, सदाचार और परोकार करने से प्राप्त हो जाता है। हमारा जीवन यज्ञमय बने इसके बारे में क्या हम कभी सोचते हैं? क्या कभी सोचते हैं कि अपने साथ ही साथ परिवार के हर सदस्य की उन्नति हो, पड़ोसी भी हमारे जैसा सुखी हो और समाज में हर कोई आगे बढ़े। आज समस्या यही है कि हम अपनी उन्नति तो चाहते हैं

लेकिन सब की उन्नति में अपनी उन्नति नहीं मानते हैं। जिस दिन हमारे अंदर यह भाव आ जाएगा कि सबकी उन्नति में ही हमारी उन्नति है, उस दिन हमारा जीवन यज्ञमय होकर सार्थक बन जाएगा।

जीवन जीने का तरीका, नियम या भाव हम जैसा रखते हैं हमारा जीवन वैसा भी बनता जाता है। लेकिन हम श्रेष्ठ जीवन बिताने के बारे में क्या कभी विचार करते हैं? सवाल यह उठता है, किसे श्रेष्ठ जीवन कहेंगे और किसे अश्रेष्ठ जीवन? श्रेष्ठ जीवन की कसौटी क्या है? इस छोटे लगने वाले लेकिन महत्त्वपूर्ण सवाल पर हम कभी विचार करते हैं? लेकिन वेद में इसे मानव जीवन का सबसे बड़ा और महत्त्वपूर्ण सवाल कहा गया है। वेद में कहा गया है–हे मानव सोचो। मैं कौन हूं? कहां से आया हूं? और किस काम के लिए आया हूं। यानी हमारा जन्म किस लिए? किसके लिए और मैं कौन हूं, जैसे सवाल जीवन के बारे में उठाए गए हैं। एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण बात है, जिसे हम कभी महत्त्वपूर्ण मानते ही नहीं हैं। वह है–हम रातदिन दूसरों के बारे में तो सोचते रहते हैं लेकिन क्या कभी अपने बारे में भी सोचते हैं? जब हम अपने बारे में सोचना शुरू कर देंगे तो समझिए, हमने जीवन का यज्ञ प्रारम्भ कर दिया। दिनभर में क्या, दो–चार दिन में भी नहीं बल्कि एक–दो महीने में भी शायद ही कभी अपने बारे में सोचते हों। अपने बारे में सोचने का मतलब अपने व्यवसाय के बारे में या नौकरी के बारे में नहीं बल्कि अपने जीवन–यज्ञ के बारे में । जिस दिन हम यह सोचना शुरू कर देंगे कि हमने आज कितना सच बोला, कितना झूठ बोला, कितना परोपकार किया कितना अपकार किया, कितनी हिंसा की और कितना अहिंसा का पालन किया। जब इस प्रकार सोचना शुरू कर देंगे तब समझिए हमारा जीवन–यज्ञ प्रारम्भ हो गया। और यह जीवन यज्ञ जब पूर्ण होगा, उस दिन जीवन का पूर्णत्व हासिल हो जाएगा।

शत्रु से प्रेम

– पं. शिवशर्मा उपदेशक

एक पिता के तीन पुत्र थे। जब वे बड़े हुए, तो उसने अपने तीनों पुत्रों से कहा– ''मेरे पास एक अति सुन्दर और कीमती अंगूठी है; यह अंगूठी उस लड़के को मिलेगी जो सात दिन के भीतर नेकी का काम करेगा।'' यह सुनकर वे तीनों ही अंगूठी पाने की लालसा में अपने घर से निकले पड़े।

सात दिन के उपरान्त तीनों बेटों ने अपनी–अपनी नेकी सुनानी आरम्भ की। एक बेटा बोला, 'पूजनीय पिताजी! जब मैं घर से बाहर निकला, तो मैंने सामने से एक ऐसे पुरुष को आते देखा जिसे मुझसे सौ रुपये चाहिए थे। मैंने बिना मांगे उसे रुपये दे दिये।'' यह सुन पिता ने कहा, ''यह तो तुम्हारा धर्म था; तुमने उसके साथ कोई नेकीनहीं की।'' दूसरा बोला –'दयालु पिताजी! मैं जंगल जा रहा था। वहां एक तालाब में मैंने एक आदमी को गोते खाते देखा। मैं उसे तालाब से निकालने में यदि कुछ भी विलम्ब करता तो वह डूब जाता। पिताजी! मैं झट कपड़ों सहित पानी में कूद गया और उसको सुरक्षित बाहर निकाल लाया।''

पिता ने कहा, ''यह भी तुम्हारा धर्म था। यदि तुम ऐसा नहीं करते तो पापी होते।''

अब सबसे छोटे की बारी आई। वह बोला –'हे धर्मात्मा पिता! यहां से चलकर मैं पहाड़ी में पहुंचा। वहां मैंने देखा कि मेरा एक शत्रु एक ढलवां चट्टान पर गहरी नींद में सो रहा है। मैं चाहता तो उसको चट्टान से नीचे गिरा देता। वह ख़न्दक में गिरता और उसकी हड्डियों का भी पता नहीं चलता। यदि उसे मैं न भी गिराता, तो भी करवट लेने पर वह उस गहरी खन्दक में गिर पड़ता। मैंने उसको जगाकर सचेत कर दिया और उसे मरने से बचा लिया।'' इतना सुनते ही पिता ने वह अंगूठी उसको दे दी और कहने लगे, ''सच्ची नेकी तुमने की है – तुमने शत्रु पर दया दर्शाई है। तुम उसको मार डालते या मरने देते तो तुम अपराधी नहीं थे, क्योंकि वह तुम्हारा शत्रु था, पर तुमने ऐसा नहीं किया! तुम धन्य हो। आओ, मैं तुम्हारा मुखड़ा चूमूं।

फल– अपने शत्रु से भी प्रेम करो। यह वैदिक शिक्षा है।

मार्च 2015 में वैदिक साधन आश्रम तपोवन को दान देने वाले में दानदाताओं की सूची

क्र.स.	नाम	स्थान	धनराशि
1.	श्री कृष्ण गोपाल जी	दिल्ली	2100=00
2.	श्री बी०बी० जौहरी जी	दिल्ली	40000=00
3.	अग्निहोत्री धर्मार्थ ट्रस्ट	दिल्ली	60000=00
4.	श्री नन्द किशोर अरोड़ा जी	दिल्ली	750=00
5.	श्री जुगल किशोर कन्सल	पंचकुला	1200=00
6.	निखिल अग्रवाल चैरिटेबल ट्रस्ट	—	51000=00
7.	श्री महावीर प्रसाद	सहारनपुर	500=00
8.	श्रीमती भावना मलिक	मुम्बई	1200=00
9.	सर्व कल्याण धर्मार्थ न्यास	पानीपत	15000=00
10.	श्री श्याम सुन्दर सोनी	गुड़गांव	12000=00
11.	श्री श्याम सुन्दर सोनी एवं श्रीमती सुदेश सोनी	गुड़गांव	5100=00
12.	ऋषिवस्त्र व्यापार प्रा० लि०	नई दिल्ली	100000=00
13.	ब्रह्म धर्मार्थ ट्रस्ट	दिल्ली	50000=00
14.	जन कल्याण ट्रस्ट	दिल्ली	50000=00
15.	यज्ञ भगवान ट्रस्ट	दिल्ली	40000=00
16.	दर्शन कुमार एण्ड सन्स	दिल्ली	90000=00
17.	गणेश अग्निहोत्री फैमिली ट्रस्ट	दिल्ली	40000=00
18.	श्रीमती रीतु रानी शर्मा	सोनीपत	11000=00
19.	श्री विकास (कैमिस्ट)	दिल्ली	51000=00
20.	श्री ओम प्रकाश हंस	दिल्ली	3100=00
21.	श्री शशी सेठ C/o श्री सीताराम कालड़ा	दिल्ली	2000=00
22.	कु० रश्मि मदान	नई दिल्ली	10000=00
23.	श्रीमती प्रगति कुमार	दिल्ली	21000=00
24.	डिलाईट नावल्टीज C/o श्री वेद मिगलानी जी	दिल्ली	11000=00
25.	श्री विनीश आहुजा जी	दिल्ली	2000=00
26.	श्री दर्शन कुमार अग्निहोत्री जी	दिल्ली	5000=00
27.	श्रीमती इन्द्रा आहुजा	दिल्ली	6500=00
28.	श्री धीरेन्द्र मोहन	देहरादून	500=00
29.	श्री वेद मिगलानी जी	दिल्ली	2000=00
30.	श्री ओमप्रकाश हंस	—	501=00
31.	श्री प्रेम बजाज व श्रीमती सन्तोष बजाज	—	4000=00
32.	श्री मनमोहन कुमार जी	देहरादून	500=00
33.	श्री प्रेमप्रकाश शर्मा जी	देहरादून	2000=00
34.	माता सुरेन्द्र अरोड़ा जी	देहरादून	5000=00
35.	श्री रवि खेड़ा जी	जनकपुरी, दिल्ली	11000=00
36.	श्री नितिन रामावत जी	अमृतसर	500=00
37.	श्री आशीष गुप्ता (सी०ए०)	देहरादून	20000=00
38.	श्री धर्मसिंह शास्त्री जी	गुड़गांव	5100=00

वैदिक साधन आश्रम तपोवन देहरादून सभी दानदाताओं का धन्यवाद करता है।

ग्रीष्मोत्सव 2015 में वैदिक साधन आश्रम तपोवन को दान देने वाले में दानदाताओं की सूची

क्र.स.	नाम		धनराशि
1.	माता नरेन्द्र बब्बर जी	(उत्सव हेतु)	1500=00
2.	श्री प्रेम प्रकाश शर्मा जी	(सदस्यता राशि)	6000=00
3.	माता सत्या सचदेवा जी	(उत्सव हेतु)	500=00
4.	श्री रणवीर पाहवा व निशा जी	(उत्सव हेतु)	4000=00
	श्री रणवीर पाहवा व निशा जी	(सदस्यता राशि)	6000=00
5.	श्रीमती पारिका सूद	(उत्सव हेतु)	1100=00
6.	श्रीमती रश्मी यति	(उत्सव हेतु)	2100=00
7.	माता सरोज यति वैश्य	(उत्सव हेतु)	500=00
8.	गुप्त दान	(उत्सव हेतु)	1100=00
9.	गुप्त दान	(उत्सव हेतु)	1100=00
10.	श्रीमती सन्तोष शर्मा	(उत्सव हेतु)	1100=00
11	स्व० अर्जुन देव महाना	(उत्सव हेतु)	3100=00
12.	श्री प्रवीण कुमार मित्तल	(उत्सव हेतु)	1100=00
13.	श्रीमती ईशार देवी सपरा	(उत्सव हेतु)	2100=00
14.	श्री देव दत्त आर्य	(उत्सव हेतु)	500=00
15.	श्री दर्शन कुमार जी व श्रीमती सरोज कुकरेजा जी	(सत्संग भवन हेतु)	34000=00
16.	श्री सत्यवीर नागर जी	(उत्सव हेतु)	2100=00
17.	श्रीमती मोहिनी गुप्ता जी	(उत्सव हेतु)	500=00
18.	श्रीमती सुखवीरी जी	(उत्सव हेतु)	200=00
19.	श्री रतन सिंह आर्य	(उत्सव हेतु)	500=00
20.	डा० एम०एम० बजाज	(उत्सव हेतु)	1000=00
21.	श्री छक्कन लाल व श्रीमती सत्यवति जी	(उत्सव हेतु)	2251=00
22.	श्री कृष्णदेव कपूर	(सदस्यता राशि)	1200=00
23.	श्री प्रदीप शर्मा	(उत्सव हेतु)	1100=00
24.	श्री हरबंस लाल जी	(उत्सव हेतु)	500=00
25.	माता लीलावति जी	(उत्सव हेतु)	501=00
26.	श्री देवेन्द्र जी	(उत्सव हेतु)	501=00
27.	श्री रमेश चन्द्र आर्य	(उत्सव हेतु)	1200=00
28.	श्रीमती शारदा देवी	(उत्सव हेतु)	5100=00
29.	श्री के०बी० तनेजा	(उत्सव हेतु)	1100=00
30.	श्री भूपेन्द्र सिंह जी	(उत्सव हेतु)	500=00
31.	मास्टर वेदपाल जी	(उत्सव हेतु)	5100=00
32.	श्री धीरेन्द्र मोहन सचदेवा	(उत्सव हेतु)	2100=00
33.	श्री चमन लाल आर्य	(उत्सव हेतु)	1100=00
34.	श्रीमती गायत्री शर्मा	(उत्सव हेतु)	030=00
35.	श्रीमती विमला गुप्ता जी	(उत्सव हेतु)	1100=00
36.	श्रीमती शान्ति गुप्ता जी	(उत्सव हेतु)	1100=00
37.	मास्टर मातादीन जी	(उत्सव हेतु)	2000=00
38.	श्री राजेन्द्र कुमार जी	(उत्सव हेतु)	500=00
39.	श्री बाल कृष्ण अरोड़ा जी	(उत्सव हेतु)	500=00

वैदिक साधन आश्रम तपोवन देहरादून सभी दानदाताओं का धन्यवाद करता है।

Saturn Series

CPU Holder

Slide out Keyboard tray

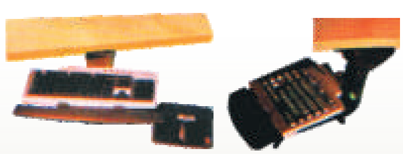

Swivel and Tiltable keyboard tray

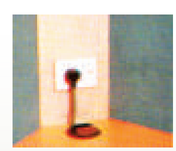

Wire Management

All dimensions are subject to change without any prior notice because of continuous research & development. All designs shown here are proprietary: Any infringement is liable for prosecution.

DE BONO FLEXCOM (INDIA) LTD.: Kukreja House, 1st Floor, 46, Rani Jhanshi Road, New Delhi-110055
Ph : 011-23540721. 23533936 **Fax :** 23533944 **Email :** debono@debonoindia.com

डाक पंजीयन UA/DO/DDN/75/2015-17 समाचार पत्र पंजीयन 51900/88

MUNJAL SHOWA मुंजाल शोवा

मुंजाल शोवा लिमिटेड देश में टू व्हीलर / फोर व्हीलर उद्योग में सभी प्रमुख ओ.ई.एम. के लिए शॉक एब्जोर्बर, फ्रंट फोर्क्स, स्ट्रट्स (गैस चार्जड और कंवेंशनल) और गैस स्प्रिंगो का सबसे बड़ा निर्माता है। निर्मित उत्पाद, गुणवत्ता और सुरक्षा के कड़े मानों के अनुरूप होते हैं। कम्पनी के उत्पाद बाधामुक्त, आरामदेह, चिरस्थायी, विश्वसनीय और सुरक्षित यात्रा के लिए जाने जाते हैं। मुंजाल शोवा लिमिटेड, टीएस–16949, आईएसओ 14001, ओ.एच.एस.ए.एस. 18001 और टीपीएम प्रमाणित कम्पनी है। मुंजाल शोवा लिमिटेड का शोवा कार्पोरेशन जापान के साथ तकनीकी और वित्तीय सहयोग करार है।

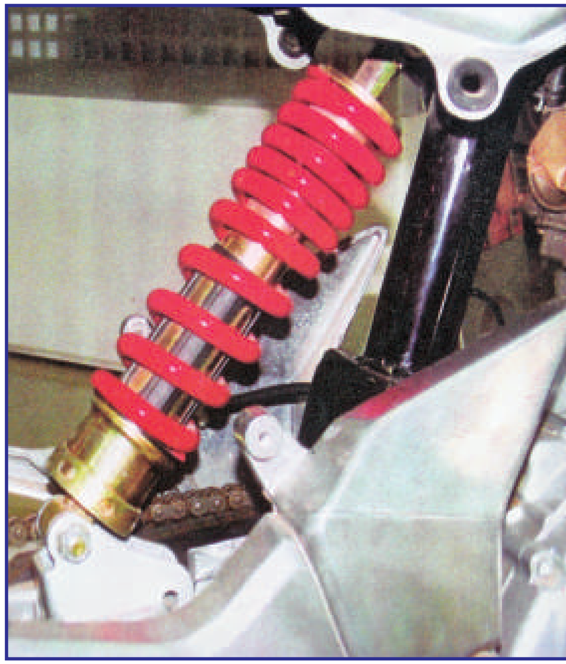

टीपीएम प्रमाणित कम्पनी

आईएसओ/टीएस–16949–2002 प्रमाणित

आईएसओ–14001 एवं ओएचएसएएस–18001 प्रमाणित

हमारे ख्यातिप्राप्त ग्राहक

- हीरो मोटोकोर्प लिमिटेड
- मारुती सुजुकी इन्डिया लिमिटेड
- होन्डा कार्स इन्डिया लिमिटेड
- होन्डा मोटर साइकल एवं स्कूटर इन्डिया (प्र0) लिमिटेड
- इन्डिया यामहा मोटर (प्र0) लिमिटेड

हमारा उत्पादन

- स्ट्रट्स/गैस स्ट्रट्स
- शॉक एब्जॉर्बर्स
- फ्रन्ट फोर्कस
- गैस स्प्रिंगस/विन्डो बैलेन्सर्स

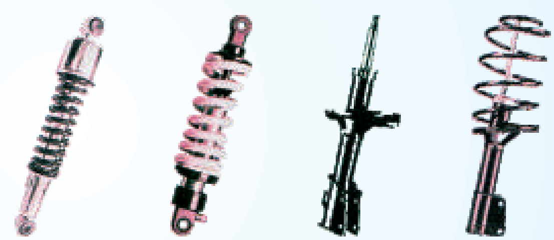

मुंजाल शोवा लिमिटेड

प्लॉट नं0 9–11, मारुति इन्डस्ट्रीअल एरिया, गुड़गाँव। दूरभाषः 0124–2341001, 4783000, 4783100
प्लॉट नं0 26 इ एवं एफ, सेक्टर–3, मानेसर, गुड़गाँव। दूरभाषः 0124–4783000, 4783100
प्लॉट नं0 1, इन्डस्ट्रीअल पार्क–2, सालेमपुर गाँव, मेहदूद–हरिद्वार, उत्तराखण्ड दूरभाषः 0124–4783000, 4783100

वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी के लिए प्रकाशक मुद्रक प्रेम प्रकाश द्वारा सरस्वती प्रेस, 2, ग्रीन पार्क, निरंजनपुर, देहरादून–248001 (उत्तराखण्ड) से मुद्रित एवं वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी (रजि.), नालापानी, देहरादून (उत्तराखण्ड) से प्रकाशित। संपादक– कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री